2015 | अंक 21

अश्मिका

राजभाषा कार्यान्वयन समिति द्वारा प्रसारित पत्रिका

वाडिया हिमालय भूविज्ञान संस्थान

देहरादून–248001

2015 | अंक 21

अश्मिका

राजभाषा कार्यान्वयन समिति द्वारा प्रसारित पत्रिका

संपादक:
डॉ. (श्रीमती) मीरा तिवारी

सदस्य:
रामबीर कौशिक
ज्ञान प्रकाश

प्रकाशक:
राजभाषा कार्यान्वयन समिति
वाडिया हिमालय भूविज्ञान संस्थान
देहरादून–248001

मुद्रण स्थल:
एलाइड प्रिन्टर्स
84, नहर वाली गली, देहरादून
फोन : 0135–2654505

आवरण चित्र:
जम्मू के निकट स्थित मानसर झील का विहंगम दृश्य

छायाकार:
रामबीर कौशिक

पत्रिका में प्रस्तुत विचार लेखकों के स्वयं अपने हैं। संपादक मंडल/विभाग/प्रकाशक का उनसे सहमत होना आवश्यक नहीं है।

विषय सूची

निदेशक की लेखनी से		i
सम्पादकीय		ii
प्रकाश की प्रकृति : एक ऐतिहासिक परिदृष्टि	नीरज तिवारी	1
उड़ीसा का भूविज्ञान	कौमुदी जोशी	5
ज्योमेट्री	रमेश चन्द्र	8
मिज़ोरम संक्षेत्र का संक्षिप्त भूवैवर्तनिक विश्लेषण	राहुल वर्मा	10
मौसम परिवर्तन एक प्राकृतिक चक्र या मानवीय	पी.एस. नेगी	18
जीवनचर्या आधारित रोग–अवसाद	कौमुदी जोशी	22
हिमालय की उत्पत्ति : कुछ संशय, कुछ सुझाव	अशोक दुबे	25
तमसो मा ज्योतिर्गमय.....	अभिषेक मिश्र	27
उत्तराखण्ड में भूकम्पीय जोखिम	गौतम रावत	30
सहस्त्रधारा, एक वैज्ञानिक दृष्टिकोण	जूली जायसवाल	32
विज्ञान और चिंतन के अद्भुत सम्मिश्रण : ईवान एफ्रेमोव	अभिषेक मिश्र	36
घटते वन, बढ़ती आपदाएं	एन.के. तिवारी	39
विशाखा दिशा–निर्देश : वर्तमान परिस्थितियों में.......	अभिषेक मिश्र	42
विभीषण का राज्याभिषेक	अशोक दुबे	46
उचित–अनुचित	अमित कुमार वर्मा	48
चुंबकीय पहाड़ी	संदीप कुमार चबाक	50
नंदा देवी राजजात यात्रा	संजीव डबराल	51
मेरा सफर	विशाल चौहान	55
माँ का जाना	मंजु पंत	58
सूर सरोवर	विशाल चौहान	60
वृद्ध माता पिताः एक बोझ	कल्पना चन्देल	63
प्राचीन भारत में विज्ञान	मीनल मिश्रा	65
पहाडों की गोद से	विशाल चौहान	67
ऊंचे पहाड़	शान्ति प्रकाश 'जिज्ञासु'	68
उड़ान	कल्पना चन्देल	69
मैं और आस्था	महेन्द्र प्रताप सिंह बिष्ट	70
वाडिया संस्थान हूँ मैं	पी0एस0 नेगी	71
नव–वर्ष 2015	पी0एस0 नेगी	73
एक पत्थर की कहानी	जूली जायसवाल	74
संस्थान समाचार		75

निदेशक की लेखनी से

अश्मिका का इक्कीसवां संस्करण आपके सामने प्रस्तुत है। 'अश्मिका' मातृ भाषा के प्रति लगाव का एक प्रतिबिम्ब है। हमेशा से ही वैज्ञानिक लेख इस पत्रिका का एक महत्वपूर्ण हिस्सा रहे हैं और मेरा यह मानना है जितने अधिक उच्च स्तर के वैज्ञानिक शोध कार्य इस पत्रिका के माध्यम से वैज्ञानिक लेखों के रूप में जागरूक जनता तक पहुँचेंगे उतना अधिक भूविज्ञान के क्षेत्र में किये गए कार्यों का वास्तविक रूप में प्रचार, प्रसार होगा और अश्मिका सही मायने में जन कल्याण का माध्यम बनेगी। प्रति वर्ष हिंदी के प्रति रूचि रखने वाले लोगों का उत्साह अश्मिका के लिए बढ़ता जा रहा है। इस उत्साह का कारण इसमें छपे लेखों का स्तर है। वैज्ञानिक लेखों से लेकर सामान्य ज्ञान, संस्मरण, कहानी, कवितायें सभी का समावेश अश्मिका में सामान रूप से हुआ है। इस उत्साह को जगाये रखने के लिए मैं सभी लेखकों को बधाई देता हूं। भविष्य में भी अश्मिका उन्नति के पथ पर अग्रसर रहेगी यही मेरी शुभकामना है।

अनिल कुमार गुप्ता

सम्पादकीय....

ज्ञान विज्ञान की सीमाएं भौगोलिक सीमाओं से परे हैं और इसका विस्तार भाषाओं की सीमाओं को सुलझा कर ही प्राप्त किया जा सकता है। भूमंडलीकरण के दौर में हिंदी का प्रयोग विश्व भर में शुरू हो चुका है और हिंदी अपने अस्तित्व का प्रमाण भी देने लगी है। इसी के साथ हिंदी के प्रति नकारात्मक सोच में कमी आई है। सबसे बड़ी बात यह है कि हिंदी भाषी लोगों में हीनता की ग्रंथि धीरे – धीरे ढीली पड़ रही है, परन्तु फिर भी इसके व्यापक विस्तार और मौलिक रूप को अक्षुण्ण रखने के सामने अनेक चुनौतियां हैं जिसके लिये निरंतर प्रयास की आवश्यकता है। हमारे सामने जहाँ पब्लिक स्कूलों एवं कालेजों में हिंदी न जानने वाले छात्रों की संख्या है उससे भी बड़ी चुनौती हिंदी भाषी प्रदेशों के छात्रों की उस संख्या की है जो उच्च शिक्षण संख्याओं में दाखिला तो पा जाते हैं परन्तु विश्वविद्यालय स्तर पर हिंदी में विज्ञान की पुस्तकों की अनुपलब्धता की वजह से विज्ञान को आंशिक रूप से समझने के कारण अपनी प्रतिभा को प्रतियोगी परीक्षाओं और आन्तरिक परीक्षाओं में प्रदर्शित ही नहीं कर पाते, ये छात्र परीक्षाओं की दौड़ में बहुत पीछे छूट जाते हैं और देश इन प्रतिभाओं के समुचित उपयोग से वंचित रह जाता है। कागजी औपचारिकताओं से परे जाकर वास्तविक धरातल पर इसका समाधान बहुत जरूरी है कि किस तरह विज्ञान को अपनी भाषा में उपलब्ध कराया जाये ताकि हमारी भावी पीढ़ी अपनी बौद्विक कुशलता के प्रदर्शन में पीछे न रह जाय और हीनता से उबर अपना हक पा सके। देश का बौद्विक विकास अपनी भाषा में ही ज्यादा तर्क संगत और सर्वग्राह्य होता है, अपनी भाषा को जानना और उससे जुड़ जाना अप्रत्यक्ष रूप से अपने देश की संस्कृति व गरिमा के साथ जुड़ जाना है और इसी से समग्र विकास की नींव पड़ेगी। केवल हिन्दी प्रेमियों को सम्मान देने से नहीं अपितु प्राइमरी से विश्वविद्यालय स्तर पर हिंदी के व्यापक प्रचार, प्रसार व प्रयोग से पूरी तौर पर हिंदी के अस्तित्व को सुरक्षित रखा जा सकता है।

इसके साथ ही एक चुनौती भाषा के स्वरूप की भी है। भाषा जब तक अपने परिष्कृत रूप में न आये वह ग्राह्य नहीं हो सकती। आजकल हिन्दी के लिये देवनागरी के बदले रोमन लिपि को अपनाने का आग्रह जगह–जगह सुनाई पड़ता है। लिपि विहीन भाषा परिष्कृत नहीं कहलाई जा सकती और अपना सौन्दर्य खो देती है। हिन्दी को इस दुर्बोध से बचाना होगा। राजभाषा हिन्दी के विकास के लिये प्रभावी और स्थाई योजना बहुत जरूरी है। सूचना और संचार तकनीक के इस युग में यह काम कठिन और असंभव नहीं है। हम सभी को सम्मिलित रूप से इस प्रयास को आगे बढ़ाना होगा।

मीरा तिवारी

प्रकाश की प्रकृति : एक ऐतिहासिक परिदृष्टि

नीरज तिवारी
भौतिकी विभाग, लाजपत राय महाविद्यालय, गाजियाबाद

मैक्सवेल ने पूर्व में ज्ञात विद्युत तथा चुम्बकीय प्रभावों के फैराडे, ऐम्पिअर, तथा गौस के नियमों को एक समग्र दृष्टि से समझने का प्रयास किया। ज्ञातव्य हो कि गौस का नियम आवेश और विद्युत क्षेत्र के मध्य तथा ऐम्पिअर का नियम विद्युत धारा तथा इसके द्वारा उत्पन्न चुम्बकीय क्षेत्र के मध्य संबंध स्थापित करता है। ऐम्पिअर का नियम ओरस्टेड द्वारा 1820 में संयोगवश देखे गए प्रभाव की परिणिति थी। यद्यपि ऐसे संयोग भी उन्हीं के साथ घटित होते हैं जो सम्बन्धित कार्य में डूबे होते हैं। ओरस्टेड ने अपने मित्रों तथा शिष्यों को अपने घर में चुम्बकत्व तथा विद्युत धारा के ऊष्मीय प्रभाव का प्रदर्शन करने के लिए आमंत्रित किया था। प्रदर्शन के दौरान उन्होंने पाया कि चुम्बकत्व के प्रदर्शन हेतु जैसे ही तार में विद्युत धारा प्रवाहित की जा रही थी कम्पास की सुई तार के लम्बवत विस्थापित हो जाती थी। यद्यपि ओरस्टेड इस प्रभाव को सैद्धांतिक रूप में नहीं समझा पाए, तथापि प्रायोगिक तौर पर चुम्बकीय पदार्थों से इतर भी चुम्बकत्व का पाया जाना (विद्युत धारा द्वारा) एक पथ प्रदर्शक घटना थी। ऐम्पिअर ने इस प्रभाव से प्रभावित हो कर कई प्रयोग किये, जैसे एक ही दिशा में धारा बहने वाले तारों का आकर्षित होना और विपरीत दिशा में बहने पर प्रतिकर्षित होना, इस प्रयोग के पीछे ऐम्पिअर की सोच थी कि यदि तार की धारा से उत्पन्न चुम्बकीय प्रभाव से चुम्बकीय सुई विस्थापित हो सकती है तो दो तारों में धारा प्रवाहित होने पर इनके मध्य भी पारस्परिक क्रिया होनी चाहिये। ऐसे प्रयोगों के आधार पर उन्होंने धारा तथा चुम्बकत्व के मध्य सम्बन्ध स्थापित करने वाले सूत्र को स्थापित किया जो उनके ही नाम से ऐम्पिअर का नियम कहलाया और 1827 में विद्युत चुम्बकत्व के विज्ञान (जिसे उन्होंने इलेक्ट्रोडायनमिक्स कहा) की आधारशिला रखी।

इतिहास के महान प्रयोगवादियों में से एक फैराडे का विचार था कि जैसे धारा चुम्बकीय प्रभाव उत्पन्न करती है उसी प्रकार चुम्बकीय क्षेत्र द्वारा धारा उत्पन्न भी होनी चाहिये। उनकी इस सोच के पीछे यह अन्तर्दृष्टि थी कि विद्युत बल प्रकृति के संयुक्त बल (यूनिफाइड फोर्स) का ही आविर्भाव (मेनीफेस्टेशन) है। वास्तव में ओरस्टेड का 1920 का प्रयोग ही ऐम्पिअर तथा फैराडे के महान कार्य का प्रेरक बना। 1831 में फैराडे ने विद्युत चुम्बकीय प्रेरकत्व के सिद्धांत को प्रकाशित किया जिसके अनुसार चुम्बकीय प्रभाव से धारा (विद्युतीय प्रभाव) उत्पन्न की जा सकती है। इस प्रकार ओरस्टेड, ऐम्पिअर तथा फैराडे ने विद्युतचुम्बकत्व के विज्ञान की आधारशिला रखी।

अपने शोध पत्र (*ओन फिजिकल लाइन ऑफ फोर्स* 1861–62) में मैक्सवेल ने धारा के प्रवाह और माध्यम के विषय में अपनी अवधारणा कुछ ऐसे प्रस्तुत की है: माध्यम कोशिकाओं में विभाजित है जो कार्य रूप में घूमते पदार्थ के भंवर के रूप में हैं, ये कोशिकायें कणों से बनी कोशिका भित्तियों से विभाजित हैं। कण कोशिकाओं के मध्य भित्तियाँ विभाजन का काम करते हैं और ये ही कण विद्युतीय पदार्थ हैं और इनकी गति धारा उत्पन्न करती है तथा स्पाज्या बल (टेन्जेन्शिअल फोर्स) जिससे कोशिकाओं का पदार्थ इन कणों को दबाता है, विद्युत वाहक बल है तथा कणों का एक दूसरे पर दाब (प्रेशर) विद्युत तनाव (विभव) है। पदार्थ के भिन्न हिस्सों में इस तनाव का अंतर ही धारा के प्रवाह का कारण बनता है; चालकों (कंडक्टर्स) में वास्तविक धारा (आवेश) का प्रवाह होता है जबकि कुचालकों (डाईलेक्ट्रिक) में मैंक्सवेल ने विद्युत क्षेत्र के प्रभाव में आवेश के धूर्वण के फलस्वरूप धारा का प्रवाह समझाया। आवेश का धूर्वण वैसे होता है जैसे चुम्बक का प्रभाव लोहे के कणों पर होता है। मैक्सवेल के

अनुसार चालक की तुलना एक पारगम्य (पोरस) भित्ति से की जा सकती है जिससे पदार्थ का अवागमन हो सकता है जबकि कुचालक का विद्युतीय व्यवहार एक ऐसी अपारगम्य भित्ति की तरह है जिससे पदार्थ तो नहीं लेकिन एक ओर का तनाव दूसरी ओर संचारित हो जाता है। इस प्रकार विद्युत (इलेक्ट्रिसिटी) का कुचालक से/में एक निश्चित दिशा को विस्थापन हो जाता है, यह एक प्रकार से धारा की शुरूआत है परन्तु वास्तव में धारा इस विद्युत विस्थापन (डिस्प्लेसमेंट ऑफ इलेक्ट्रिसिटी) में परिवर्तन के फलस्वरूप उत्पन्न होती है। इसी वैज्ञानिक सोच के साथ विस्थापन धारा (डिस्प्लेसमेंट करेंट) की अवधारणा को प्रस्तुत किया। मैक्सवेल को ऐम्पिअर का नियम अपूर्ण प्रतीत हुआ तथा 1864 के शोध पत्र *'अ डायनैमिकल थ्योरी ऑफ एलेक्ट्रोमेग्नेटिज्म'* में इस नियम में विस्थापन धारा का समावेश कर अवकल समीकरणों के रूप में फैराडे, ऐम्पिअर तथा गौस के नियमों को प्रस्तुत किया। नियमों को इस प्रकार गणितीय रूप में रखना जो ऐतिहासिक परिणाम ले कर आया वह यह था कि विद्युत चुम्बकीय परिवर्तन विद्युत चुम्बकीय तरंगों को उत्पन्न करते हैं जिनका वेग प्रकाश के वेग के समान होता है। मैक्सवेल इस निष्कर्ष पर पहुंचे कि प्रकाश भी विद्युतचुम्बकीय विकिरण है तथा यह भी प्रस्ताव दिया कि दृश्य प्रकाश विभिन्न प्रकार की विद्युतचुम्बकीय तरंगों के परिवार का मात्र एक हिस्सा है। इस खोज पर रिचर्ड फैनमेन का कहना है कि आज से दस हजार वर्ष पश्चात जब इतिहास में दृष्टिपात किया जायेगा तो उन्नीसवीं शताब्दी की सबसे महत्वपूर्ण घटना मैकसवेल के विद्युत चुम्बकत्व के नियमों की खोज होगी, अमेरिकी ग्रह युद्ध से भी कहीं अधिक महत्वपूर्ण।

यह वह समय था जब पदार्थ की आंतरिक संरचना सही रूप में ज्ञात नहीं थी। यद्यपि आंतरिक तौर में पदार्थ की संरचना और कार्यात्मकता (स्ट्रक्चर तथा फंक्शन) भविष्य में मैक्सवेल की इस सोच से भिन्न पायी गई परन्तु प्रभाव रूप में मैक्सवेल विद्युत चुम्बकत्व को और प्रकाश की प्रकृति को समझाने में अत्यन्त सफल रहे। एक और बात उपरोक्त अनुच्छेद तथा ईथर की अवधारणा पर गौर करने से स्पष्ट होती है, वह ये कि न्यूटोनियन सोच किस प्रकार विज्ञान तथा वैज्ञानिकों में हावी थी। मैक्सवेल के विद्युत चुम्बकीय सिद्धांत से प्रकाश की प्रकृति को समझने में ईथर (प्रकाशवाही माध्यम) की आवश्यकता निहित है और इसकी प्रत्यास्थता प्रकाश के अनुप्रस्थ कम्पन को समझने के लिए। विस्थापन धारा की अवधारणा को पेश करने में भी मैक्सवेल का ईथर की उपस्थिति में विश्वास स्पष्ट रूप से परिलक्षित होता है। कोलरौस तथा वेबर के प्रकाश के वेग संबंधी विद्युत चुम्बकत्व के प्रयोगों (1855) के अध्ययन पर मैक्सवेल ने कहा यदि ये सहअस्तित्व और समान प्रसार के माध्यम भिन्न भी हैं तब भी वायु के चुम्बकीय माध्यम की प्रत्यास्थता और ईथर की प्रत्यास्थता एक समान हैं। प्रसंग आने पर यह जिक्र भी करना आवश्यक प्रतीत होता है कि वेबर ने 1857–1864 में तथा किर्चोफ ने 1857 में स्वतंत्र रूप से यह दिखाया कि विद्युत चुम्बकीय संकेत नगण्य प्रतिरोध के तार से प्रकाश के वेग से गति करते हैं। यह बात मैक्सवेल के विद्युत चुम्बकीय सिद्धांत के प्रकाशित होने से भी पहले की है। परन्तु मैक्सवेल की महत्ता इस बात से भी है कि उन्होंने विद्युत चुम्बकत्व को एक व्यापक सिद्धांत के रूप में प्रस्तुत किया था और किसी बिंदु पर सीधे प्रभाव (एक्शन ऐट ऐ डिस्टेंस) से इतर क्षेत्र सिद्धांत (फील्ड थ्योरी) की स्थापना की। इस विषय पर थोड़ा और नज़र डालें तो हम पाते हैं कि फैराडे ने क्षेत्र सिद्धांत (फील्ड थ्योरी) के लिए आवश्यक प्रायोगिक एवं सैद्धांतिक प्रारूप दिया और मैक्सवेल ने गणितीय विधा का समुचित उपयोग करते हुए (विद्युत चुम्बकीय) क्षेत्र सिद्धांत को स्थापित किया। मैक्सवेल ने स्वयं कहा ''जो सिद्धांत मैं प्रतिपादित कर रहा हूँ उसे विद्युत चुम्बकीय क्षेत्र सिद्धांत कहा जाय क्योंकि इसका संबंध (प्रभाव) विद्युत तथा चुम्बकीय वस्तुओं के आसपास के क्षेत्र (स्पेस) से है। हालांकि फैराडे का भी ख्याल था कि जो माध्यम (ईथर) प्रकाश के संचरण से सम्बंधित है वही विद्युत चुम्बकीय प्रभाव में भी सहयोगी

होगा। यदि ईथर है तो यह तरंगों के संचरण मात्रा का सहयोगी ही नहीं होगा वरन प्रभाव (बल) भी माध्यम जनित हो सकता है। यह दूरी पर स्थित किसी बिंदु पर सीधे प्रभाव (एक्शन ऐट ऐ डिस्टेंस) से भिन्न सोच थी। आइंसटीन ने इस पर कहा कि वास्तविकता को पदार्थीय बिन्दुओं से इतर एक सतत (कंटीन्यूअस) क्षेत्र के रूप में प्रस्तुत करने का प्रयास सैद्धांतिक रूप से (भौतिकी में) वास्तविकता की संरचना को समझने का एक बहुत गंभीर व फलदायी परिवर्तन था।

लोरेंज ने मैक्सवेल के विद्युत चुम्बकीय सिंद्धांत का विस्तार करते हुए प्रस्तावित किया कि विद्युत चुम्बकीय क्षेत्र वास्तव में सूक्ष्म स्तर (अणुओं) पर उपलब्ध विद्युत आवेशों के द्वारा उत्पन्न होते हैं; और प्रस्तावित किया कि प्रकाश के उत्सर्जन के पीछे अणुओं के इलेक्ट्रोनों की गति तथा संक्रियाएँ प्रभावी हैं। जीमान ने प्रायोगिक तौर पर 1896 में यह दर्शाया कि चुम्बकीय क्षेत्र में परमाणुओं से उत्सर्जित प्रकाश कई हिस्सों में बंट जाता है (अर्थात् वर्णक्रम में दिख रही रेखाएं चुम्बकीय क्षेत्र लगाने पर कई रेखाओं में विभक्त हो जाती हैं)। यह प्रयोग लोरेंज़ के विचारों को सत्यापित करता था, तथा अपने इलेक्ट्रॉन सिद्धांत के द्वारा लोरेंज ने इस घटना को सफलतापूर्वक समझाया ही नहीं अपितु यह भी बताया कि इस प्रकार विभक्त प्रकाश ध्रुवित होता है अर्थात् प्रकाश के कम्पन चुम्बकीय क्षेत्र के प्रभाव में एक निश्चित रूप में उन्मुख (ओरिएंटेड) हैं। प्रकाश की उत्पत्ति तथा प्रकृति को समझने अर्थात् इसकी विद्युत चुम्बकीय प्रकृति को स्थापित करने के इस प्रयास के लिए हैंड्रिक लोरेंज़ तथा शिष्य पीटर जीमान को 1902 में भौतिकी का दूसरा नोबेल पुरस्कार प्रदान किया गया, यह कार्य विज्ञान में सैद्धांतिक तथा प्रायोगिक (थियोरेटिकल एवं प्रायोगिक) कार्य के सामंजस्य की आवश्यकता तथा अनुरूपकता का भी एक उत्तम उदाहरण है।

मैक्सवेल (1831–1879) के जीवनकाल में विद्युत चुम्बकीय तरंगों की अवधारणा को निश्चित प्रयोगात्मक आधार प्राप्त नहीं हो पाया, अंततः 1888 में जर्मन वैज्ञानिक हेनरिक हर्ट्ज़ ने दो आवेशित चालक गोलों के मध्य उपस्थित वायु अंतराल (एयर गैप) में प्रत्यावर्ती धारा प्रवाहित कर विद्युत चुम्बकीय तरंगों का साक्ष्य प्रस्तुत किया। यद्यपि यह इतिहास की विडम्बना ही कही जा सकती है कि यह प्रयोग जो प्रकाश की विद्युत चुम्बकीय प्रकृति को दर्शाता है इस बात का प्रथम संकेत बना कि प्रकाश (और प्रकृति) की हमारी यह समझ सिक्के का मात्र एक हिस्सा है। हर्ट्ज़ ने पाया कि पराबैंगनी किरणों के एक चालक गोले में आपतन की स्थिति में संसूचक (डिटेक्टर) में चिंगारियां (स्पार्क्स) अधिक सुगमता से उत्पन्न होने लगतीं हैं। इस घटना को भविष्य में प्रकाश विद्युत प्रभाव के रूप में जाना गया। 1905 में आइंस्टीन ने इस प्रभाव को समझाते हुए प्रकाश की कण प्रकृति का रूप उजागर किया। चूंकि प्रकाश की तरंग प्रकृति क्रिस्टियन हैगन के 17वीं शताब्दी (1678) के प्रकाश के तरंग सिद्धांत के समय से विचार में हैं और व्यतिकरण, विवर्तन तथा ध्रूवण के रूप में स्पष्ट हैं; इसका अर्थ निकला कि प्रकाश की प्रकृति द्वैत है (ड्यूल नेचर ऑफ लाइट)। भविष्य में धीरे–धीरे स्पष्ट हुआ कि प्रकाश ही नहीं माया का यह भौमिक संसार पूर्ण रूप में ही द्वैत प्रकृति वाला है। 1905 में ही आइंस्टीन ने एक अन्य क्रान्तिकारी विचार देते हुए ईथर की अवधारणा को खारिज कर दिया। यद्यपि आज भी बहुत से वैज्ञानिक ईथर की उपस्थिति को पूर्णतया अस्वीकार नहीं करते। माइकेलसन व मोरले के प्रयोग (1887) ईथर की खोज हेतु किए गये थे। प्रकाश की पृथ्वी की गति के और गति के लम्बवत दिशा में वेग के आधार पर पृथ्वी ईथर के सापेक्ष गति को ज्ञात करने के लिए, जिससे ईथर की उपस्थिति का प्रमाण मिल सके। परन्तु प्रयोग तथा प्रयोग की विभिन्न परिस्थितियों में पुनरावृत्ति के पश्चात् भी नकारात्मक परिणाम प्राप्त हुआ। अंततः आइंस्टीन ने सापेक्षता के विशिष्ट सिद्धांत की नींव रखते हुए कहा कि ईथर में से होती हुई गति एक अर्थहीन विचार है तथा सभी जड़त्वीय प्रेक्षकों के लिए प्रकाश का वेग नियत (कांस्टेंट) है। यद्यपि माइकेलसन स्वयं इस सिद्धांत से सहमत नहीं थे पर उनके

परिशुद्धमापी (प्रेसीजन) उपकरण और प्रयोगों के लिए उन्हें 1907 का नोबेल पुरस्कार प्रदान किया गया। आइंस्टीन को सापेक्षता सिद्धांत के लिए यह सर्वोच्च सम्मान नहीं मिला। इस सिद्धांत को तब तक पुष्ट न मानते हुए; अनपेक्षित रूप से लम्बे अंतराल के बाद उन्हें 1921 का नोबेल पुरस्कार मिला। नोबेल समिति के अनुसार सैद्धांतिक भौतिकी में उनके योगदान मुख्यतया प्रकाश की कण प्रकृति को प्रकाश में लाने वाले प्रकाश विद्युत प्रभाव के स्पष्टीकरण (जो कि क्वांटम भौतिकी के विकास की अहम कड़ी बना) के लिए प्रदान किया गया।

(वर्ष 2015 को संयुक्त राष्ट्र शैक्षिक, वैज्ञानिक एवं सांस्कृतिक संगठन द्वारा ''प्रकाश एवं प्रकाश आधारित प्रौद्योगिकी का अन्तर्राष्ट्रीय वर्ष'' घोषित किया गया है।)

उड़ीसा का भूविज्ञान

कौमुदी जोशी
भा.भू.सं., भुवनेश्वर

भारतीय प्रायद्वीप से दक्षिण पूर्वी छोर पर स्थित समुद्र तट पर बसा उड़ीसा यूँ तो कालाहाँड़ी की अति गर्मी के कारण जाना जाता है, पर यहां विकास की असीम सम्भावनाएं हैं। इस राज्य में अर्थ व्यवस्था सुधारने हेतु प्राकृतिक संसाधन एवं खनिज हैं, उद्योगों के लिए ईंधन है, कृषि के लिए मृदा है, तथा सिचाई एवं ऊंर्जा उत्पादन हेतु जल है। नदियों में नदी महानदी, ब्राह्मणी एवं वैतरणी के साथ इस राज्य से होकर बहती है। छोटे बड़े नदी नालों को समुद्र में मिलने से पहले रोककर, बाँध बनाये जा रहे हैं अतः भविष्य में जल संसाधन प्रचुरता में पीने एवं पौधों के लिए उपलब्ध रहेगा तथा हरित आवरण क्षेत्र का तापमान कम करने में मदद देगा।

यदि महानदी तथा उसके उत्तर में बहने वाली ब्राह्मणी नदी को ध्यान से मानचित्र पर देखा जाय तो ये नदियाँ समुद्र में मिलने से पहले उत्तर की ओर बहना शुरू करती हैं, तत्पश्चात पूर्व की ओर जाकर डेल्टा बनाती हैं। वास्तव में यह स्थिति उस क्षेत्र की शैल श्रृखलाओं की उत्तरोन्मुख गति की सूचक है (चित्र–1)। यह गति एक भ्रंश की उपस्थिति के कारण है (चित्र–2)। इंडियन प्लेट की यूरेशियन प्लेट की ओर गति के बारे में हम सब जानते हैं। पूर्व काल में जब कान्टिनेन्टल ड्रिफ्टिंग हो रही थी जब गोन्डवाना लैण्ड

चित्र -1.गूगल फोटोग्राफ में महानदी,ब्राह्मणी नदी एवं चिलिका झील सहित ओड़िशा की भू-आकतिक संरचनाएं।

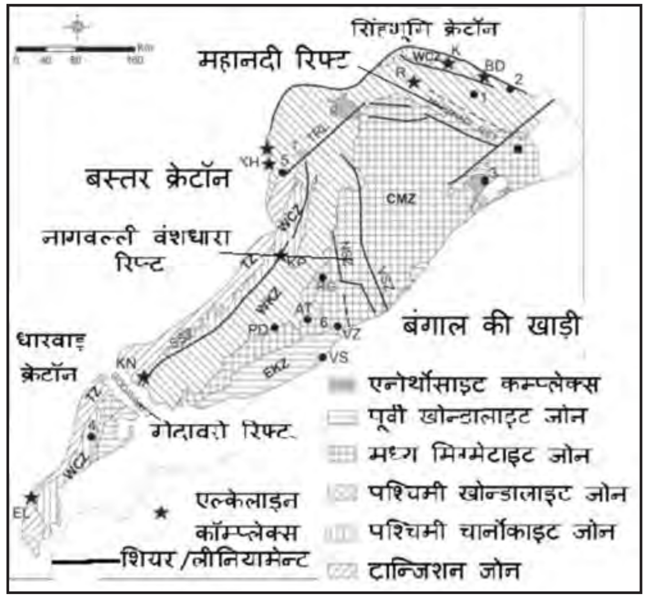

चित्र 2: ओड़िशा का भूवैज्ञानिक एवं भूसंरचनात्मक मानचित्र।

से टूटकर लंका सहित भारतीय उपमहाद्वीप दक्षिण से उत्तर की ओर बढ़कर यूरेशियन प्लेट से जा टकराया (चित्र–3) ग्लोब मानचित्रण द्वारा इस परिस्थिति को बेहतर समझा जा सकता है (चित्र–4)। भारत एवं इन्डोनेशिया को अलग करने वाली प्लेट सुमात्रा फाल्ट लाइन (चित्र–5) के कारण एक दूसरे से अलग होती मानी जाती है पर इस फाल्ट लाइन के गंगा यमुना के बाढ़ जनित मैदान में सिद्व करना एक जोखिम भरा कार्य है (चित्र–6)। भारत को उत्तरी व दक्षिणी भागों में विभक्त करने वाले संरेखण का आधार सोन नर्मदा लीनियामेन्ट अथवा तापी नर्मदा रिफ्ट सिस्टम या सी आई एस सेन्ट्रल इंडियन सूचर है। यह माना जाता है कि यह लीनियामेन्ट आज भी सूक्ष्म रूप से गतिमान हो सकता है तथा महानदी एवं ब्राहमणी की उत्तर की ओर गति इस लीनियामेन्ट के कारण ही प्रभावी हो रही है।

भारतीय महाद्वीप का अवलोकन करने पर इसमें विभिन्न चलित पट्टियाँ दिखाई देती हैं जैसे सूदूर

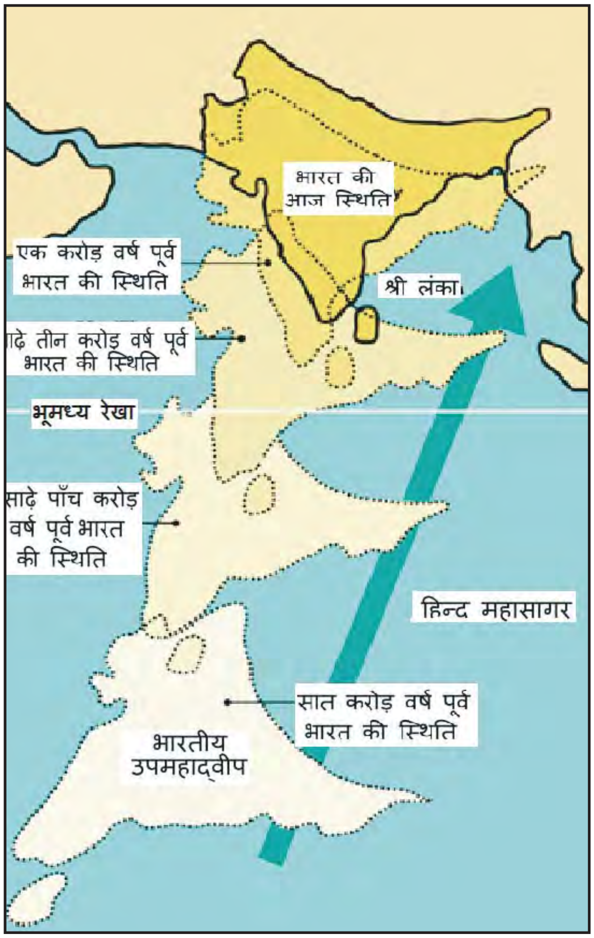

चित्र 3: भारतीय उपमहाद्वीप प्लेट की चालन अवस्थाएं।

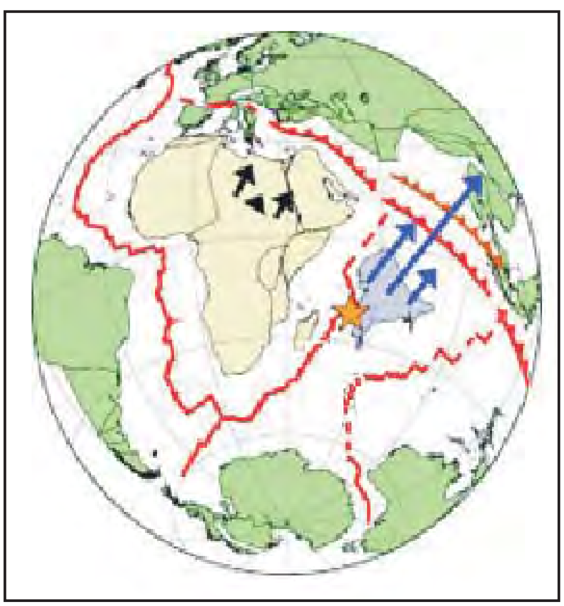

चित्र 4: छह करोड़ वर्ष पूर्व भारतीय उपमहाद्वीप प्लेट की चालन अवस्था।

चित्र–5: भारतीय उपमहाद्वीप प्लेट सिस्टम।

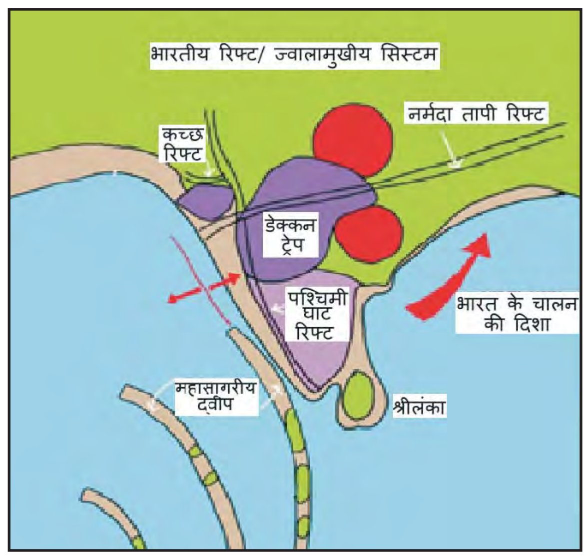

चित्र 6: भारतीय उपमहाद्वीप के रिफ्ट सिस्टम एवं लघु द्वीप मालाएं।

दक्षिण में धारवाड़ चलित पट्टी (धारवाड़ मोबाइल बेल्ट), ईस्टर्न घाट चलित पट्टी तथा अरावली दिल्ली चलित पट्टी। इस चलित पट्टियों के कारण ही ये क्षेत्र भूकम्प से प्रभावित होने पर खतरनाक भी हो सकते हैं। जबकि इन्हीं पट्टियों के बीच का भाग जैसे धारवाड़, क्रेटॉन, बस्तर क्रेटॉन, सिंहभूमि क्रेटॉन तथा अरावली–दिल्ली–बुन्देलखण्ड क्रेटॉन भूकम्पीय दृष्टि से सुरक्षित माने जाते हैं। इन क्रेटान्स के ऊपर विन्ध्यन, छत्तीसगढ़, खेरियार, इन्द्रावती व कड़प्पा

प्रोटीरोजोइक प्लेटफार्म के अवसादी शैल हैं। जिनके ऊपर गोन्डवाना तथा डैक्कन वोल्केनिक अवस्थित हैं।

उड़ीसा की मुख्य शैलें पूर्वी घाट चलित पट्टी व उसके आसपास की शैल हैं जो समुद्र के नजदीक उच्च ताप व आद्रता के कारण अधिकांशतः अवक्षेपित हैं। उत्तर में सिंहभूमि क्रेटान एवं ईस्टन घाट मोबाइल बेल्ट की संधि सीमा महानदी ग्राबन के रूप में दृष्टिगत है। दक्षिण मध्य भाग में गोदावरी ग्रेबन है तथा सेन्ट्रल इंडियन सूचर के दक्षिण में स्थित महानदी व गोदावरी ग्राबन के बीच नागवल्ली वंशधारा शियर जोन उड़ीसा का एक मुख्य कमजोर संरेखण हैं। (चित्र–2)। पूर्वी घाट चलित पट्टी मुख्यतः तीन प्रकार के शैलों से बनी है जैसे चारनोकाइट, खोन्डालाइट एवं ग्रेनाइट नाइस एवं मिग्मेटाइट। उड़ीसा के पश्चिमी छोर पर स्थित बस्तर क्रेटान है जो जगह–जगह पर किम्बरलाइट एवं लेम्प्रोइट से बिद्व होकर हीरे की प्राप्ति का एक सुलभ स्थान हो सकता है। (चित्र–8)। इस बस्तर क्रेटान एवं पूर्वी घाट चलित पट्टी के बीच का लम्बा पतला क्षेत्र ट्रान्जिशन जोन कहलाता है जिनमें उभय पक्ष के गुण पाये जाते हैं। पश्चिम से पूर्व की ओर चलें तो क्रेटान मैदान बनाता है। जबकि ट्रान्जिशन जोन के शैल पूर्वी घाट पर्वत माला बनाते हैं। जिनके साथ पूर्वी तथा पश्चिमी चार्नोकाइट, खोन्डालाइट एवं ग्रेनाइट नाइस व मिग्मेटाइट की उत्तर पूर्व से दक्षिण पश्चिम को संरेखित पट्टियां हैं (चित्र–2)।

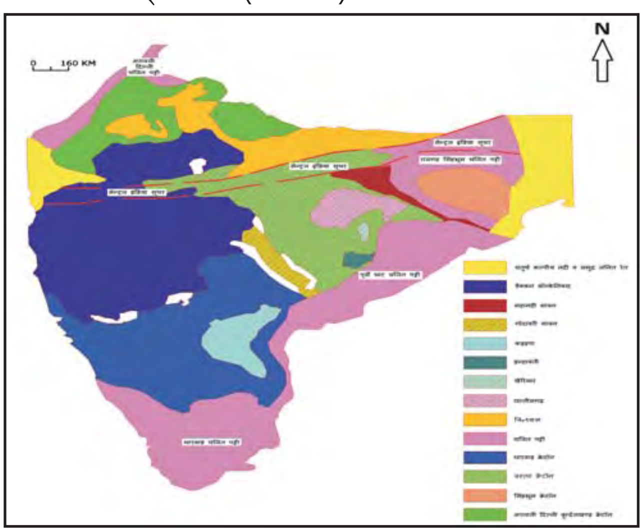

चित्र 7: भारतीय उपमहाद्वीप की साधारण भूवैज्ञानिक बनावट।

उड़ीसा लौह संसाधनों के बड़े भंडार, बाक्साइट व क्रोमाइट के क्षेत्र में धनी है। राज्य में निकिल, मैंगनीज, कैसिटेराइट एवं लौह युक्त मैग्नेटाइट की प्रचुरता है। पूर्वी घाट चलित पट्टी पर साधारणतया ग्रेविटी हाई परिस्थितियां हैं। क्रेटानों के साथ इनका ग्रेविटी ग्रेडियन्ट काफी ढलाव लिये है अर्थात पूर्वी घाट मोबाइल बेल्ट के नीचे ज्यादा गुरूत्वाकर्षण वाला पदार्थ है। वैज्ञानिकों के अनुसार कई बार डक्टाइल डिफार्मेशन एवं टेक्टानिक चालन गुरूत्व सघनता का कारण बनता है। कैल्क सिलिकेट ग्रेन्यूलाइट तथा मैग्नीशियम एल्यूमिनियम युक्त ग्रेन्यूलाइट अत्यधिक तापमान में होने वाले कायान्तरण का द्योतक है। सम्भवतः इन्हीं गुणों के कारण पूर्व से हीराकुण्ड में हीरे पाये जाने के कारण बांध का यह नाम प्रचलन में आया।

उड़ीसा राज्य में लगभग 73% प्रीकैम्ब्रियन शैलें हैं। गोन्डवाना सुपर ग्रुप की 8% एवं 19% चतुर्थ कल्पीय शैल व रेत भंडार हैं। राज्य की कुछ भूवैज्ञानिक उपलब्धियाँ निम्नानुसार हैं।

- तालचीर बोल्डर बेड तथा पूर्व गोन्डवाना हिमयुग की पहचान एवं तालचीर व ईब नदी घाटी के कोयले के भंडारों की खोज।
- एल्यूमिनियम युक्त लैटेराइट व बाक्साइट की खोज।
- उच्च स्तरीय कायान्तरित अवसादी शैलों का नामांकरण कालाहाड़ी की खोण्ड जनजाति के नामानुसार खोण्डालाइट करना।
- मयूरभंज के गुरूमहिसिनी एवं बादाम पहाड़ क्षेत्र में मुख्य लौह अयस्क की खोज।
- बरीपदा के समीप टर्शियरी शैलों की पहचान।
- मैगनींज अयस्क का वर्गीकरण।
- चार्नोकाइट शैल का अध्ययन।
- बोगाई के उन्झर के लौह अयस्कों का मानचित्रण।
- गंगपुर ग्रुप के मेटा सेडिमेन्ट्स का अध्ययन।
- पश्च चतुर्थ कल्पीय ज्वालामुखीय राख का उड़ीसा का नदी घाटियों में पाया जाना।

ज्योमेट्री

रमेश चन्द्र
290/4, एम.डी.सी., पँचकुला, हरियाणा

कुछ समय पूर्व मुझे इ.टी. बैल द्वारा लिखित 'मैन ऑफ मैथमेटिक्स' शीर्षक की पुस्तक पढ़ने का अवसर मिला। उस पुस्तक के जिस पृष्ठ को सर्वप्रथम मैंने खोला, उस पर एक ऐसा प्रसंग वर्णित था जिस की तह में एक गहन प्रश्न इस प्रकार है: जिस विचार पर ज्ञानीजन हजारों वर्षों से सहमत हों क्या उस पर संदेह करना उचित है ?

यूनानी ज्योमेट्री विशेषज्ञ यूक्लिड (323–283 ई. पू.) ने तत्कालीन ज्योमेट्री सम्बन्धित ज्ञान का संग्रह किया। दो हज़ार वर्षों तक इस संग्रह पर किसी को कोई समस्या नहीं हुई वैसे तो मुझे आज भी यूक्लिड की ज्योमेट्री में सब ठीक लगता है। केवल इस ज्योमेट्री की जो दुर्दशा आजकल स्कूलों में हो रही है, उस से यूक्लिड को निराशा होती। एक नौवीं कक्षा के छात्र को कोण ज्ञान नहीं है। मेरा मत है कि इस में दोष छात्र का कम तथा स्कूल एवं समाज का अधिक है।

रूसी गणितज्ञ निकोलस लोबाचेव्स्की (1793–1856) ने यूक्लिड की ज्योमेट्री को कुछ भिन्न दृष्टि से परखा। उन्हें यूक्लिड के समानान्तर रेखाओं से सम्बन्धित कथन पर संदेह हुआ। इ.टी. बैल के अनुसार यूक्लिड को स्वयं भी इस भाग पर चिंता थी क्योंकि वह इसे पूर्ण रूप से सिद्ध नहीं कर पाये थे। लोबाचेव्स्की ने इस कथन में सुधार करने का प्रयास किया। उनके मित्रों तथा शुभचिंतकों ने समझाया कि यदि तुम असफल रहे तो लोग हँसेंगे। अनेक वर्षों के परिश्रम से वह सफल ही नहीं हुए उन्होंने एक नयी ज्योमेट्री का अविष्कार कर दिया। इसे हम नॉन–यूक्लिडियन ज्योमेट्री के नाम से जानते हैं। गणित में इस से एक नया विशाल क्षेत्र खुला।

समय के साथ अन्य गणितज्ञों ने भी इस दिशा में प्रयास किये। इन में एक रीमान भी थे जिन की रीमानियन ज्योमेट्री को आइन्सटाइन ने अपनी रैलेटिविटी थ्योरी का आधार बनाया। मैंने पढ़ा है कि यदि रीमान की ज्योमेट्री न होती तो आइन्सटाइन को इस का आविष्कार स्वयं करना पड़ता।

क्लिफर्ड नाम के एक व्यक्ति ने लोबाचेव्स्की की जीवनी लिखी तथा उन्हें गणित का कॉपरनिकस कह कर सम्मान दिया। विदित रहे कि कॉपरनिकस ने 16वीं शताब्दी में सौर मंडल के भूकेंद्रित होने का तर्क दे कर खगोल विज्ञान को झकझोर दिया था। विकिपीडिया के अनुसार लोबाचेव्स्की की यह प्रशंसा अधूरी है। उनके के कार्य का प्रभाव इस से भी अधिक महत्वपूर्ण हैं।

20वीं सदी के एक जर्मन वैज्ञानिक तथा दार्शनिक पापर का शोधकर्ताओं को परामर्श है कि वे अपने क्षेत्र में प्रचलित थ्योरी को गलत सिद्ध करने में सदा जुटे रहें। यदि वह सफल रहे तो उस थ्योरी में उचित बदलाव का प्रयास करेंगे। इस से उस क्षेत्र में प्रगति होगी। अर्थात् पापर के अनुसार उपरोक्त प्रश्न का उत्तर हाँ है।

मैं गणितज्ञ नहीं हूँ, परन्तु गत पचास वर्षों में कुछ ऐसे दिन बीते होंगे जब मैंने लो–लेवल एप्लाइड मैथमेटिक्स का प्रयोग अपने शोध कार्यों में न किया हो। यूक्लिड की ज्योमेट्री के विषय में पढ़ कर मुझे चिंता हुई है। क्या मैं गणित के हर उस

सूत्र की निजी स्तर पर मूलभूत छान करूँ जिस का प्रयोग मैंने किया है? अथवा हर उस पृथ्वी सम्बन्धित निष्कर्ष पर संदेह करूँ जिसे मैंने गणित के प्रयोग से निकाला है ?

समस्या केवल गणित की ही नहीं है। ज्ञान तथा विज्ञान के हर क्षेत्र में इस का प्रतिबिम्ब है। यदि इस विषय पर आवश्यकता से अधिक ध्यान देंगे तो शोध कर्ता शोध नहीं करेंगे हर कदम पर 'इन्वेंटिंग दी व्हील' वाली प्रक्रिया में लगे रहेंगे और यदि समस्या की अनदेखी करेंगे और उनके शोध का आधार वास्तव में संदेहपूर्ण हुआ तो शोध के परिणाम पर क्या विश्वास रहेगा।

परन्तु, हमें यह भी तो सिखाया जाता है कि बड़े सदा ठीक कहते हैं।

स्पष्ट है कि इस संवाद से उपरोक्त मूल प्रश्न का निश्चित उत्तर प्राप्त नहीं हुआ है। केवल प्रश्न पर पुनः ध्यान आकर्षित हुआ है। इस प्रश्न पर सोच–विचार चलता रहना चाहिये।

मिज़ोरम संक्षेत्र का संक्षिप्त भूवैवर्तनिक विश्लेषण

राहुल वर्मा
पाछुन्गा यूनिवर्सिटी कॉलेज, आईज़ोल, मिज़ोरम

अवस्थिति एवं पहुँच मार्ग : मिज़ोरम राज्य भारत के सीमान्त उत्तर पूर्व में स्थित है। सामरिक दृष्टिकोण से अत्यन्त महत्वपूर्ण मिज़ोरम राज्य दो देशों से घिरा है। मिज़ोरम के पूर्व में म्यांमार तथा पश्चिम में बांग्लादेश स्थित हैं। मिज़ोरम भौगोलिक निर्देशांक विस्तार 21^{0} 56′ उत्तर–24^{0} 31′ उत्तर अक्षांश एवं 92^{0} 16′ पूर्व–13^{0} 26′ पूर्व देशान्तर के बीच है (चित्र–1: स्थिति एवं पहुंच मार्ग)।

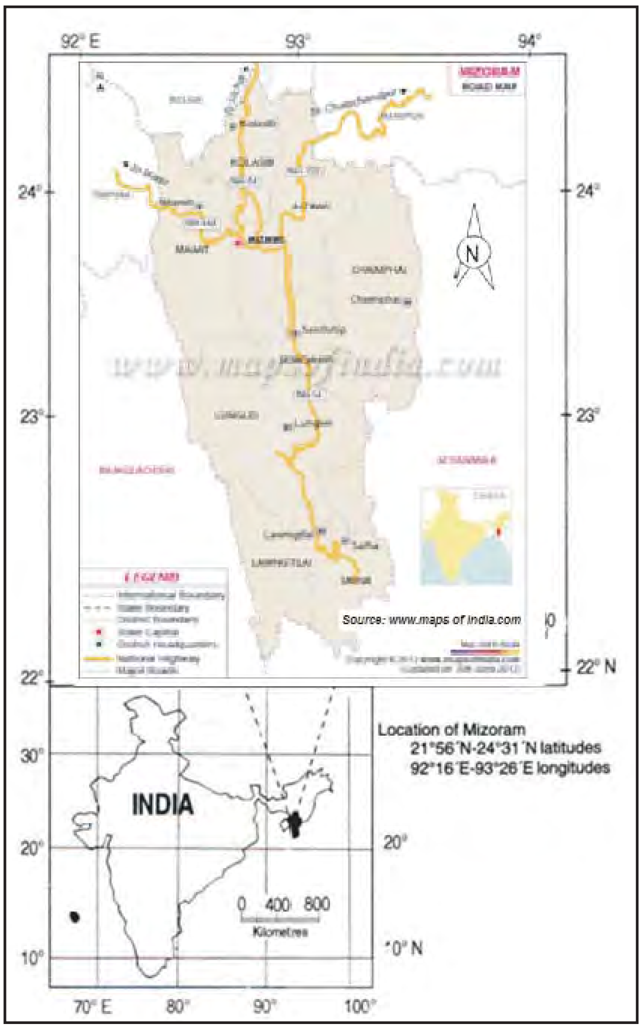

चित्र 1: अवस्थिति एवं पहुंच मार्ग।

मिज़ोरम की राजधानी आइज़ोल 23^{0}40′ उत्तर–23^{0} 45′ उत्तर एवं 92^{0} 81′ पूर्व– 23^{0} 45′ पूर्व के बीच निर्देशांकित है। यह एक दुर्गम पर्वतीय स्थल है जिसकी समुद्र तल से ऊँचाई 800 मीटर से 1188 मीटर तक है। यह देश के मुख्य भागों से सड़क एवं वायुमार्ग से जुड़ा हुआ है। कोलकाता एवं गुवाहाटी से आइज़ोल के लिए नियमित विमान सेवा उपलब्ध है। राष्ट्रीय राजमार्ग 54, आइज़ोल को सिलचर, शिलांग और गुवाहाटी से जोड़ता है। निकटतम रेलवे स्टेशन सिल्चर आइज़ोल से 180 किमी. दूर है।

भौगोलिक विशेषता : मिज़ोरम का भौगोलिक क्षेत्रफल लगभग 21,087 वर्ग किमी है। उत्तर से दक्षिण तक का विस्तार 284 किमी तथा पूर्व से पश्चिम तक का विस्तार 115 किमी है। मिज़ोरम राज्य का क्षेत्रफल भारत का 0.64% मात्र है। कर्क रेखा 23^{0}30^{0} अक्षांश पर राजधानी आइज़ोल के सीमान्त उत्तर से गुजरती है, तथा चौरतुई दारलुग एवं खदूड़ंग्से आदि स्थानों को रेखांकित करती है। कर्क रेखा मिज़ोरम राज्य को दो समान भागों में विभाजित करती है। मिज़ोरम राज्य पश्चिम में बांग्लादेश की चटगांव पर्वत श्रृंखला तथा त्रिपुरा की जामपुई पर्वत माला से, पूर्व एवं दक्षिण में म्यांमार की चिन पर्वत श्रृंखला, उत्तर में आसाम के कछार जिले तथा मणिपुर के चूढ़ाचान्दपुर जिले से घिरा हुआ है।

जलवायु : मिज़ोरम क्षेत्र, उष्णकटिबंधीय अक्षांश में स्थित होने के पश्चात भी मध्यम जलवायु का आनंद उठाता है। चरम शीत एवं चरम ग्रीष्म यहाँ नहीं होते हैं। एक प्रकार से यहाँ की जलवायु को वातानुकूलित कहा जा सकता है। यहां तीन ऋतुएं पायी जाती हैं – शीत (नवम्बर से फरवरी तक), ऊष्म अथवा वसंत ऋतु (मार्च से मई तक) एवं वर्षा ऋतु (मई से अक्टूबर तक)।

वर्षा : समस्त क्षेत्र दक्षिण–पश्चिमी मॉनसून के प्रबल प्रभाव के अन्तर्गत आता है। बंगाल की खाड़ी से उत्पन्न होने वाले आंधी तूफान एवं चक्रवात, दक्षिण दिशा से राज्य पर आक्रमण करते रहते हैं। राज्य की औसत वर्षा 257 से.मी. है। राज्य के पश्चिमी एवं दक्षिणी भाग में वर्षा अधिक होती है।

स्थलाकृति : मिज़ोरम की स्थलाकृति ''पर्वत एवं घाटी'' शैली की है। पर्वत श्रृंखला की नति उत्तर से दक्षिण की ओर है तथा उसी दिशा में विस्तृत नदी घाटियों का बाहुल्य है। उच्चावच में खड़ी ढलानों का बाहुल्य है। समस्त क्षेत्र युवावस्था में तथा निर्माण की प्रक्रिया के अंतर्गत सतत अनाच्छदित हो रहा है। स्थलाकृति विविधता का अभाव स्पष्ट है, किन्तु विशेष रूप से पर्वतों की पश्चिमी ढलानों की प्रवणता, पूर्वी ढलानों की अपेक्षा अधिक है। अधिकांश ऊंची पर्वत चोटियाँ भी पश्चिमी भाग में स्थित हैं, जिनमें फांग्पुई 2157 मीटर तथा लेंगते, 2149 मीटर, प्रमुख हैं (चित्रः स्थलाकृति मानचित्र)।

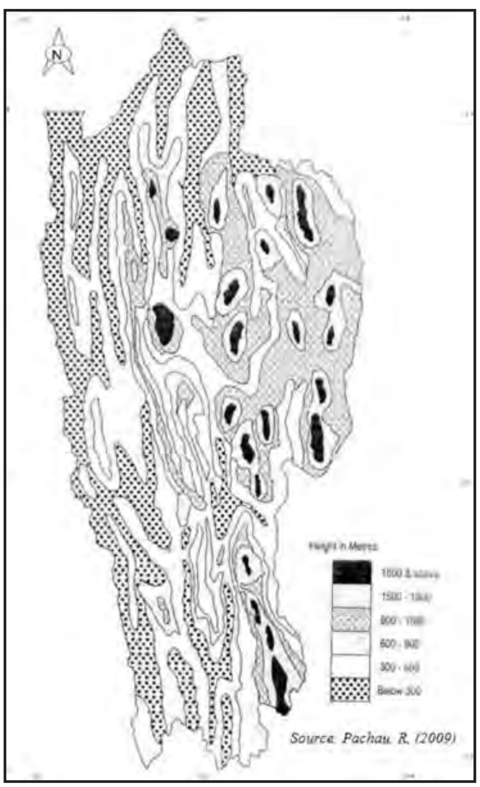

चित्र 2: उच्चावच मानचित्र।

प्रवाह प्रणाली : उत्तर से दक्षिण की ओर विस्तृत घाटियां, उच्चावत आदि विशेषता के कारण लगभग सभी नदियां राज्य के मध्य भाग से उद्गमित होती हैं तथा उत्तर अथवा दक्षिण की ओर प्रवाहित होती हैं। प्रवाह की दिशा के आधार पर मिज़ोरम की प्रवाह प्रणाली को दो भागों में बांटा जा सकता हैः–

(क) उत्तर वाहिनी प्रवाह प्रणाली : मिज़ोरम की समस्त उत्तर वाहिनी नदियाँ, ''बरक नदी तंत्र'' में समाहित होती हैं इनमें से प्रमुख हैं–त्लोंग, तुइवाल, तुइरियल, लंगकाइन एवं तुइवाई। इनमें से त्लोंग नदी प्रमुख हैं, जिसकी लंबाई 185 किमी है। तुत एवं टेरेई, त्लोंग की मुख्य सहायक नदियां हैं। ये समस्त नदियां असम के कछार क्षेत्र में बरक नदी में मिलती हैं। उल्लेखनीय है, कि बरक नदी, पूर्व–दक्षिणपूर्व की ओर प्रवाहित होते हुए, बांग्लादेश में मेघना नदी के नाम से जानी जाती है, ढाका से 50 किमी. स्थित चाँदपुर के निकट गंगा–ब्रह्मपुत्र के संयुक्त प्रवाह से मिलती है एवं वृहद् मेघना के रूप में बंगाल की खाड़ी में मिलती है अतः यह सत्यापित होता है कि मिज़ोरम की समस्त उत्तरवाहिनी नदियां अंततः गंगा–ब्रह्मपुत्र प्रणाली में समाहित होती हैं।

(ख) दक्षिण वाहिनी प्रवाह प्रणाली : मिज़ोरम की समस्त दक्षिण वाहिनी नदियां, चिमतुईपुई या कलडॉन की सहायक नदियां हैं तथा इन्हें ''कलडॉन प्रवाह प्रणाली'' का अंग कहा जा सकता है। प्रमुख नदी कलडॉन की लंबाई 138 किमी. है। इसके अतिरिक्त मैट, टुइचांग, टियाऊ राज्य के पूर्वी भाग में प्रवाहित होती हैं। टियाऊ नदी भारत और म्यांमार के बीच सीमा निर्धारित करती है। राज्य के पश्चिमी भाग में कर्णफूली या ख्वात्लंग्तुईपुई अपनी सहायक नदियों कारपुई, टुइच्वांग, काऊ और डे के साथ भारत एवं बांग्लादेश के बीच प्राकृतिक सीमा का निर्धारण करती हैं। चिमतुईपुई (कलडॉन) नदी

म्यांमार के सित्वे बन्दरगाह क्षेत्र में बंगाल की खाड़ी में समाहित होती है। मिज़ोरम का प्रवाह तंत्र चित्र–3 में प्रदर्शित है।

मिट्टी : मिज़ोरम की मिट्टी निर्बध तलछटी संरचना प्रभावित है। यहाँ की मिट्टी, युवा, अपरिपक्व एवं रेतीली है। लाल रंग की दुम्मटी, बुनावट की लेटेराइट मिट्टी का बाहुल्य है। साथ ही यहाँ की मिट्टी उच्च अम्लीयता, निम्न पोटाश तथा फास्फोरस युक्त है।

वनस्पति : क्षेत्रीय विभिन्नताएं अक्षांश, ऊँचाई, वर्षानुपात तथा मिट्टी के स्वभाव पर निर्भर करती हैं। इन विशेषताओं के आधार पर मिज़ोरम में मुख्यतया तीन प्रकार के वनों का विस्तार है।

- **उष्णकटिबंधीय सदाबहार वन:** इनका विस्तार राज्य के पश्चिमी क्षेत्र में बांग्लादेश एवं त्रिपुरा से सटे इलाकों में है।

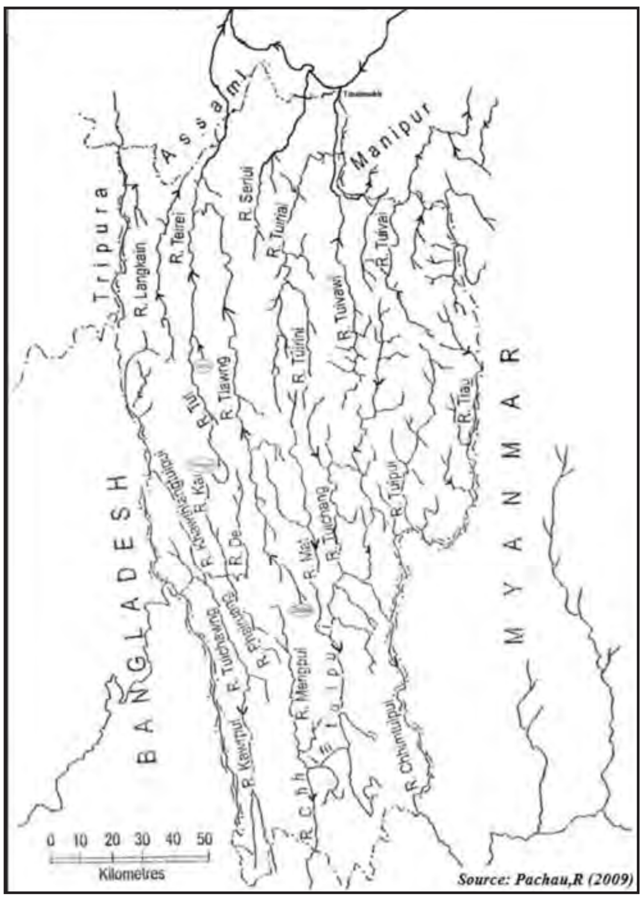

चित्र 3: प्रवाह प्रणाली।

- **उष्णकटिबंधीय अर्ध–सदाबहार वन:** मिज़ोरम के लगभग 50% वन इसी प्रकार के हैं। इन वनों का क्षेत्र विस्तृत है, उत्तर में मणिपुर की सीमा से लेकर दक्षिण में चिमतुईपुई या कलडॉन नदी की घाटी के मुहाने तक विस्तृत है।

- **उपोष्णकटिबंधीय पर्वतीय वन:** इस प्रकार के वन, राज्य के ऊंचाई वाले स्थानों, मुख्यतया पूर्वी किनारों पर पाये जाते हैं। पश्चिमी क्षेत्र में कुछ पट्टिकाओं के रूप में भी पाये जाते हैं। चित्र–4 में मिट्टी, प्रवाह प्रणाली एवं वनस्पति का सम्मिश्र प्रस्तुत किया गया है।

विवर्तनिक विकासक्रम का इतिहास

समस्त आसाम क्षेत्र के अधोस्तर के विश्लेषण के परिणामों के आधार पर यह संकेत मिलते हैं कि आसाम द्रोणी के आरंभिक निर्माण का प्रादुर्भाव ''विभंजन चक्र'' के दौरान आधार–बालुका पत्थर एवं सिलथेट चूना पत्थर'' के निक्षेपण से हुआ है। कुछ स्थानों पर निम्न अधोस्तर में पर्मियन काल की गोंडवाना समूह की

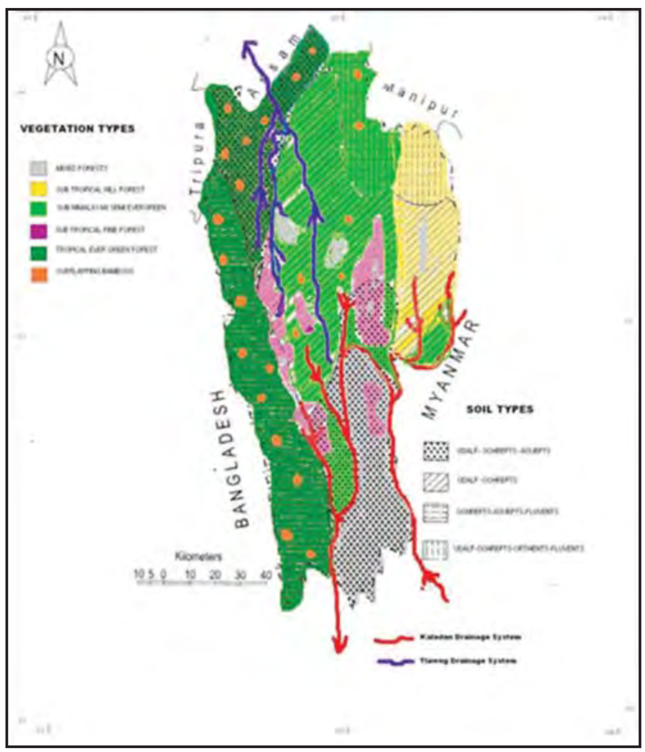

चित्र 4: मिट्टी वनस्पति एवं प्रवाह प्रणाली।

चट्टानों का मिलना, विभंजन–चक्र'' के पूर्व, ''तनावमूलक–विवर्तन'' जनित ग्रेबन की उपस्थिति का प्रमाण प्रस्तुत करता है। भूगर्भिक, भौकंपीय एवं गुरूत्वीय साक्ष्य, यह इंगित करते हैं कि द्रोणी का ढाल दक्षिण पूर्व की ओर है।

मिज़ोरम द्रोणी से संलग्न ''भारत–म्यांमार गतिमान पट्टिका'' में वृहद स्तर के वैवर्तनिक प्रभाव के कारण, इस क्षेत्र में उग्र संरचनात्मक गतिविधियां, सदैव सक्रिय रही हैं। फलस्वरूप, द्रोणी में अनेक भ्रंश पाये जाते हैं। यह गतिविधियां मायोसीन काल तक अत्यन्त उग्र रही हैं। भ्रंशों की प्रबलता पूर्व की ओर वलन की तीव्रता के साथ साथ बढ़ती जाती हैं। अनेक तिर्यक एवं संकर भ्रंश जैसे कि मैट, तुईपुई, साइटतुवाल एवं सातेक वामावर्त हैं, जबकि आइज़ोल एवं कॉलडन भ्रंश दक्षिणावर्त हैं।

''भारत–म्यांमार गतिमान पट्टिका'' में वलन एवं उत्क्रम के कारण अनेक लघु द्रोणियों का प्रादुर्भाव हुआ, जिनमें नियोजीन काल में अवसादन तीव्र गति से हुआ। अवसादन की तीव्रता के कारण अनेक सामान्य भ्रंशों का निर्माण हुआ। भारतीय प्लेट के पूर्व दिशा में स्थित, बर्मीय प्लेट के नीचे तिर्यक क्षेपण की प्रतिक्रिया के कारण, सामान्य भ्रंश, उत्क्रम भ्रंश की श्रृंखला में रूपांतरित हो गए। इन गतिविधियों के फलस्वरूप, भारतीय प्लेट का उत्तर पूर्वी किनारा संरचनात्मक दृष्टि से पार्श्वीय या नतिलंबीय भ्रंश एवं सामान्य भ्रंश की पच्चीकारी प्रस्तुत करता है।

इस मोलासे द्रोणी का उद्गम निश्चित रूप से ओलिगोसीन काल में, भारत–म्यांमार गतिमान पट्टिका के मुख्य अक्ष के समान्तर सक्रिय उग्र विवर्तनिक पर्वत निर्माणक गतिविधियों से सम्बद्ध है। इन गतिविधियों के फलस्वरूप, ''भारत–म्यांमार गतिमान पट्टिका'' के पश्चिमी भाग में संकीर्ण एवं रेखीय अग्रदीप का निर्माण हुआ। भारतीय प्लेट के उत्तर में यूरेशीय प्लेट तथा पूर्व में म्यांमारीय प्लेट के नीचे निरंतर क्षेपण के कारण उत्तरी किनारा एवं पूर्वी किनारा अपेक्षाकृत उठता चला गया। इस कारण उत्तर एवं पूर्व में स्थित उच्च स्थलखंड तलछट का स्त्रोत बने। इन्हीं स्त्रोतों से मिज़ोरम की द्रोणी में मध्य मायोसीन एवं बाद की अवधि में इस अग्रदीप में वृहद स्तर पर तलछटी अवसादन हुआ। उत्तर की दिशा में डौकी भ्रंश, सुर्मा द्रोणी की उत्तरी सीमा में स्थित सिलथेट नाँद एवं शिलोंग पठार की संपर्क सीमा निर्धारित करता है (चित्र 5: सूरमा द्रोणी का वैवर्तनिक मानचित्र). ''भारत–म्यामांर चाप'' का क्षेत्र, निचले क्रिटेशियस काल से ही जटिल विवर्तनिक प्रक्रियाओं एवं क्षेपण का क्षेत्र रहा है। यह गतिविधियां, क्वाटरनरी काल तक अधिक सक्रिय रही हैं तथा अभी भी सक्रिय हैं। ''भारत–म्यांमार पर्वत श्रृंखला में अराकान, योमा तथा चिन पर्वत समाहित हैं। इस श्रेणी के पश्चिमी किनारे पर स्थित नागा उत्क्रम भ्रंश क्षेत्र एवं बंगाल द्रोणी में स्थित वलन एवं भ्रंश क्षेत्र क्रमशः भारतीय प्लेट की उत्तरी एवं पश्चिमी सीमा निर्धारित करते हैं।

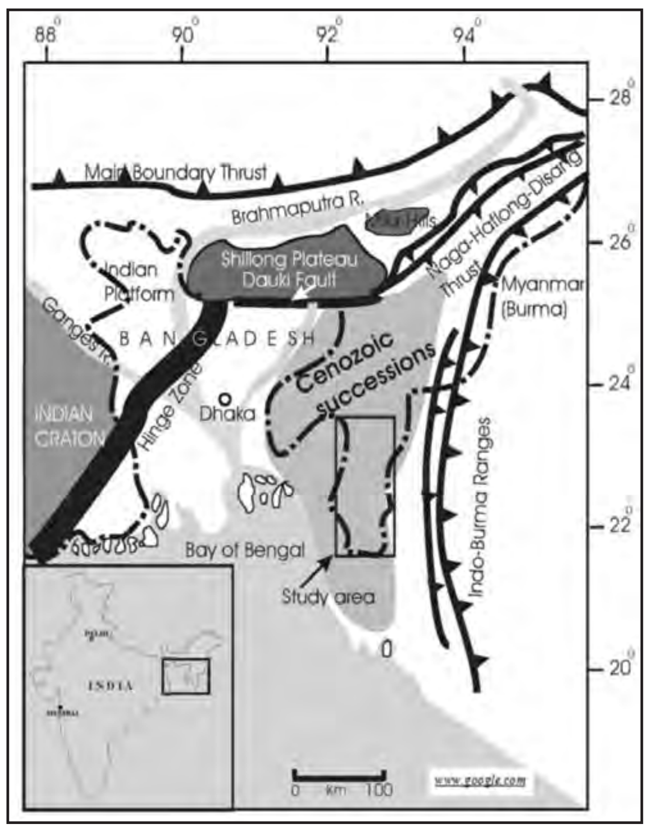

चित्र 5: सूरमा द्रोणी का वैवर्तनिक मानचित्र।

भूकंपीय संरचना एवं इतिहास

मिज़ोरम के भौकंपीय इतिहास की विवेचना, समस्त उत्तर–पूर्व की भू–संरचना के संदर्भ में की जा सकती है। उत्तर–पूर्व को चार भूकंपीय क्षेत्रों में विभाजित किया गया है (चित्र 6: मिज़ोरम की भौकंपीय संरचना)–

(i) पूर्वी हिमालय क्षेत्र
(ii) मिशमी खंड
(iii) पूर्वी सीमात क्षेत्र
(iv) शिलोंग क्षेत्र

समस्त क्षेत्र पूर्वी हिमालय एवं ''भारत–म्यांमार चाप'' के बीच स्थित है। ''भारत–म्यांमार चाप'' लगभग 3500 किमी. क्षेपण सीमा क्षेत्र है एवं यह, पूर्वी हिमालयी चाप तथा सुंडा चाप के बीच की संपर्क कड़ी है। पूर्वी हिमालय के भाग सिक्किम एवं अरूणाचल हिमालय हैं। ''भारत–म्यांमार चाप'' के अंतर्गत नागालैंड, मणिपुर, त्रिपुरा–मिज़ोरम, अराकान–योमा एवं सुदूर दक्षिण में अंडमान–निकोबार द्वीप आते हैं।

उत्तरी क्षेत्र में, भारतीय प्लेट यूरेशीय प्लेट से टकरा रही है, तथा पूर्व में भारतीय प्लेट का बर्मीय प्लेट के नीचे क्षेपण हो रहा है। इन्हीं भूगर्भिक गतिविधियों के कारण, समस्त क्षेत्र भौकंपीय रूप से सक्रिय है। अंडमान चाप भी संभवतः क्षेपण क्षेत्र में सक्रिय है।

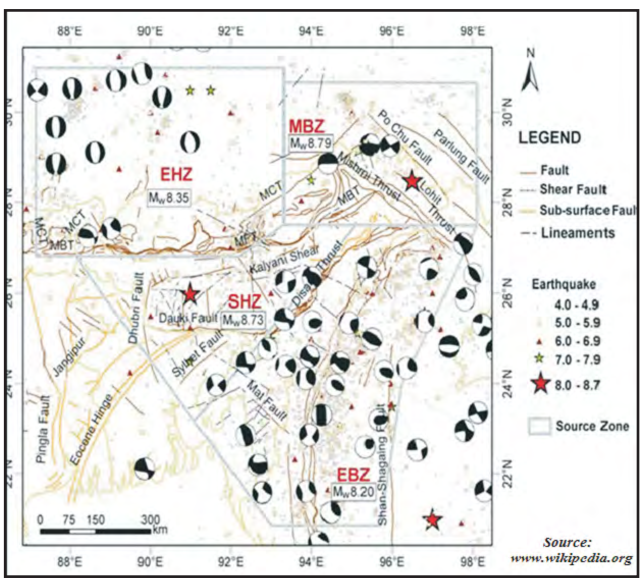

चित्र 6: मिज़ोरम की भूकंपीय संरचना।

''भारत–म्यांमार चाप'' की सक्रियता का अनुमान इस तथ्य से लगाया जा सकता है कि विगत 100 वर्षों में इस क्षेत्र में 6 से अधिक तीव्रता के 10 भूकंप आ चुके हैं। 'पोचु भ्रंश' के कारण 1950 में 8.7 की तीव्रता का आसाम भूकंप, 1897 में शिलोंग पठार के उत्थान से जनित 8.1 तीव्रता का भूकंप, 1869 में कोपिली भ्रंश द्वारा जनित 7.4 तीव्र का कछार भूकंप तथा ''भारत–म्यांमार चाप'' के पटकोई–नागा–मणिपुर एवं चीन पर्वत श्रृंखला में खिसकाव के कारण 1988 में 7.2 तीव्रता के मणिपुर भूकंप कुछ प्रमुख उदाहरण हैं।

सौभाग्यवश, मिशमी खंड भारतीय प्लेट एवं बर्मीय प्लेट के बीच पुश्ते या बंध का कार्य करता हैं तथा अभिसरण से जनित विकृतियों के प्रभाव को अल्पीकृत करता है। नागा एवं दिसांग उत्क्रम भ्रंशों का परिचालन आरेख भारतीय तथा बर्मीय प्लेट, के उत्तर दिशा में गति तथा टकराव के बाद भारतीय प्लेट के दक्षिणावर्त घूर्णन का संकेत देते हैं।

भारतीय प्लेट के बर्मीय प्लेट के नीचे क्षेपण के कारण उत्तर से दक्षिण नतिलम्ब में विस्तृत वलित क्षेत्र का निर्माण हुआ, जो कि पूर्व से पश्चिम दिशा की ओर रेखीय संकुचन का द्योतक है। इस क्षेत्र में दो प्रमुख भ्रंश चिन्हित किए गए हैं– (अ) कबाओ भ्रंश तथा (ब) सगइंग भ्रंश इनमें से कबाओ भ्रंश ''भारत–म्यांमार पर्वत श्रृंखला' एवं म्यांमार द्रोणी के बीच एक प्रमुख विवर्तनिक विराम या मध्यांतर का कार्य करता है। यह भ्रंश दक्षिण तक विस्तृत है तथा पश्चिमी अंडमान भ्रंश से जा मिलता है। (चित्र 7 ''भारत–म्यांमार चाप'' का वैवर्तनिक वैशिष्ट्य मानचित्र)। विगत 100 वर्षों में 1 से कम तीव्रता के 996, 1.2 तीव्रता के 47, 2.3 तीव्रता के 276, 3–4 तीव्रता के 339, 4–5 तीव्रता के 176 एवं 5 से अधिक तीव्रता के 58 भूकंप आ चुके हैं। उल्लेखनीय है कि 5 से अधिक तीव्रता के अधिकांश भूकंप ''भारत–म्यांमार सचल पट्टिका'' के क्षेत्र में आए।

इस क्षेत्र में कम गहरे (छिछले) मूल (0–40 किमी.) के भूकंपों की संख्या सर्वाधिक (1672) है, जबकि

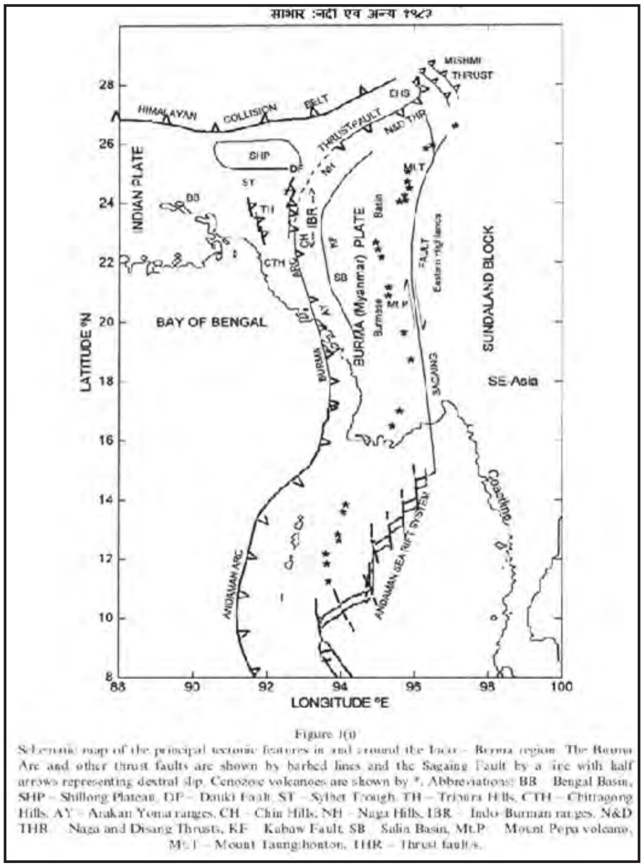

चित्र 7: भारत–म्यांमार चाप का वैवर्तनिक वैशिष्ट्य मानचित्र।

ज्यादा गहरे मूल (>60 किमी.) के भूकंपों की संख्या 90 है जो कि मुख्यतः ''भारत–म्यांमार सचल पट्टिका'' के क्षेत्र में पाये गए। (चित्र 8: ''भारत–म्यांमार पर्वत श्रृंखला'' में भौकंपीय इतिहास)। सारांशतः यह निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि उत्तर–पूर्व में, मणिपुर–म्यांमार एवं मिज़ोरम का सीमांत क्षेत्र भौकंपीय दृष्टि से सर्वाधिक सक्रिय हैं। नागा–दिसंग, डॉकी, सिलथेट, एवं कोपिली भ्रंश भूकंपजनक हैं।

भूस्खलन परिदृश्य

वस्तुतः समस्त मिज़ोरम, देश के सर्वाधिक भूस्खलन–संवेदी क्षेत्रों में से एक है। मिज़ोरम की चट्टानों का कोमल स्वभाव, अत्यधिक वर्षा, अधिक ढाल प्रवणता, विवर्तनिक गतिविधियाँ आदि के सम्मिलित प्रभाव के फलस्वरूप, भूस्खलन की घटनाओं की बारंबारता, एक वृहद सामाजिक समस्या का रूप ले चुकी है। तीव्र नगरीकरण के कारण राजधानी

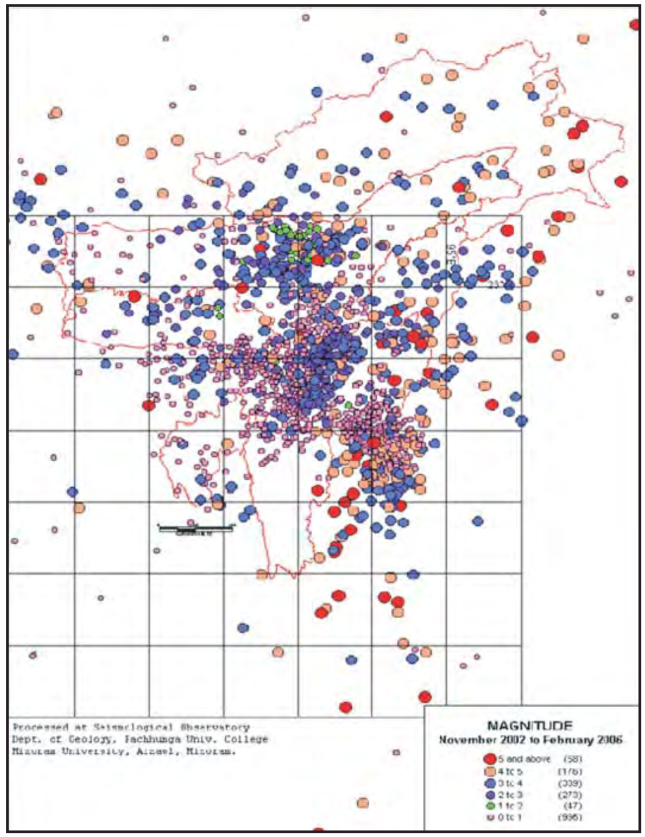

चित्र 8: ''भारत–म्यांमार पर्वत श्रृंखला'' में भौकंपीय इतिहास।

आइजोल में यह समस्या अत्यन्त गंभीर है। इस गंभीरता का आकलन इसी तथ्य से लगाया जा सकता है कि सन् 2000 से 2010 के दशक में 400 व्यक्ति भूस्खलन के कारण हताहत हुए तथा लगभग 800 आवास क्षतिग्रस्त हो चुके हैं। भूस्खलन के कारक मानसून की वर्षा के समय अत्यन्त सक्रिय हो जाते हैं तथा मानसून जाते जाते हताहतों की संख्या में और भी वृद्धि कर जाता है। भूकंप की आपदा के अतिरिक्त भूस्खलन की समस्या का समाधान अत्यंत आवश्यक है अतः इस दिशा में विशेष भूस्खलन निवारक गतिविधियों एवं वृहद आपदा प्रबंधन की आवश्यकता है।

सूरमा द्रोणी का भौगर्भिक इतिहास

नूतनकल्प में जनित सूरमा बेसिन की पूर्वी सीमा, कल्डान भ्रंश एवं परि–बरेल असंबद्धता, उत्तरी सीमा–पूर्व–पश्चिम नतिलंब में विस्तृत डॉकी भ्रंश, उत्तर पूर्वी सीमा–उत्तर पूर्व–दक्षिण पश्चिम नतिलम्ब में विस्तृत दिसंग उत्क्रम भ्रंश; पश्चिम एवं उत्तर

पश्चिमी सीमा–उत्तर पूर्व–दक्षिण पश्चिम नतिलंब में विस्तृत सिल्थेट भ्रंश जो ढाका के समीप से बंगाल द्रोणी के उत्तर पूर्वी किनारे एवं बांग्लादेश में विवस्तृत जलोढ़ अवसाद से चिन्हित होती है। दक्षिणी सीमा अराकान (म्यांमार) के तटीय क्षेत्र में मिलती है। (गांगुली, 1993), सूरमा द्रोणी में उत्तर–दक्षिण नतिलंब में 550 किमी. तक विस्तृत, पश्चिम की ओर उत्तल वलित पर्वत श्रृंखला है, जिसकी चौड़ाई अधिकतम 200 किमी. है। यह द्रोणी असम के कछार एवं करीमगंज जिले, मणिपुर राज्य के पश्चिमी भाग, सम्पूर्ण त्रिपुरा एवं मिज़ोरम राज्य तथा बांग्लादेश के सिल्थेट एवं चटगांव क्षेत्र को, समाविष्ट करती है (चित्र 9: सूरमा द्रोणी का भौगर्भिक मानचित्र)।

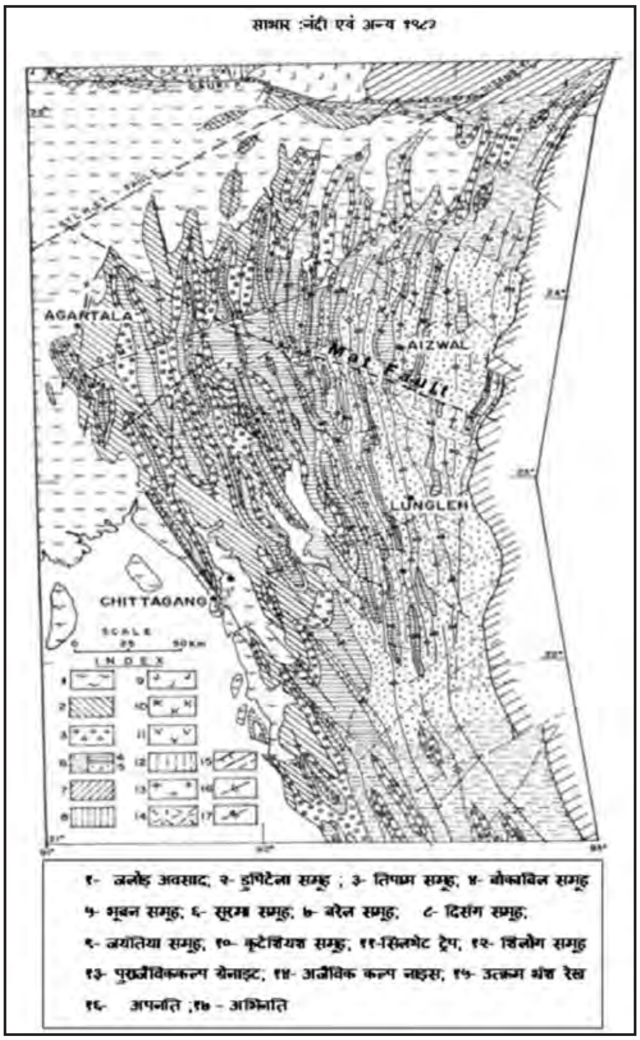

चित्र 9: सूरमा द्रोणी का भूवैज्ञानिक मानचित्र)।

सूरमा द्रोणी के पूर्व में पुराकल्प काल का जटिलतापूर्वक वलित, भ्रंशित एवं उत्क्रमित ''भारत–मयांमार गतिमान पट्टिका'' का बाह्य चाप संकुल; एवं पश्चिम में मंद ढाल एवं समनत वलन युक्त तृतीयक कल्प के बांग्लादेश की जलोढ़ अवसादी जमाव युक्त ''बांग्लादेश द्रोणी'' का विस्तार है। सारांशतः, सूरमा द्रोणी उत्तर की और चौड़ी एवं दक्षिण की ओर संकरी एक घंटाकार द्रोणी है, जिसकी पुरा प्रवणता उत्तर–उत्तर पूर्व की ओर है, एवं यह द्रोणी दक्षिण में स्थित समुद्र से सम्बद्ध थी।

सूरमा द्रोणी का स्तरिकीय अनुक्रम

मिज़ोरम, त्रिपुरा मिज़ोरम वृहद भूसन्नित का भाग है एवं ''आसाम–आराकन'' भूसन्नित का संभाग है यह समस्त मिज़ोरम क्षेत्र भारतीय एवं बर्मी प्लेट प्रभाव के अंतर्गत गतिमान हैं। इस वृहद् भूसन्नित में प्रमुखतया मोलासे प्रकार के अवसादी शैलों की प्रचुरता है। यहां की चट्टाने आसाम की तृतीयक महाकल्प के बरेल एवं सूरमा कल्प का भाग है। यहां की चट्टानें सूरमा कल्प के भुबन संस्तर का प्रतिनिधित्व करती हैं। यहां की चट्टानों में बलुआ–पत्थर शेल एवं मृदा–पत्थर की बहुलता है। इन शैलों का विस्तार उत्तर से दक्षिण की ओर है। यह समस्त क्षेत्र ''नूतन कल्प'' का प्रतिनिधित्व करता है तथा ''क्रिटेसियस तथा ''तृतीयक'' कल्प में वृहद प्लेट विवर्तनिकीय गतिविधियों से प्रभावित रहा है।

मिज़ोरम की शैल संरचना कछार पर्वत एवं पटकोई पर्वत क्षेत्र की संरचना से काफी समानता रखती है। संभवतः, इन चट्टानों का निर्माण तृतीयक महाकल्प के दौरान, हिमालय जनित नदियों के द्वारा लाये गये कणों से निर्मित डेल्टा अथवा मुहानों के संघनन से हुआ है। तृतीयक कल्प के समय मिज़ोरम में लुंगले नगर के समीप बलुआ पत्थर में सामुद्रिक जीवाश्मों के अवशेषों का पाया जाना, शैल निर्माण की इस अवधारणा का समर्थन करता है। मिज़ोरम की चट्टानों में प्रमुखतया बलुआ संस्तर एवं मृदा संस्तरों का पुनरावृत्तीय चक्र पाया जाता है जो कि उत्तर उत्तर–पश्चिम–दक्षिण

दक्षिण–पूर्व की दिशा में लम्बवत विस्तृत् असममित अपनतियों एंव अभिनतियों का निर्माण करती है। इन वलनों के अक्ष लम्बवत् हैं।

भौगर्भिक दृष्टि से, मिज़ोरम में दो समूहों –सूरमा तथा बरेल, की चट्टानों का बाहुल्य है, जिनमें कि प्रमुखतया उच्च बरेल, निम्न एवं उच्च भुबन (सूरमा समूह), मिज़ोरम का प्रतिनिधित्व करती हैं। सूरमा समूह की चट्टानें, राज्य के पश्चिमी भाग में पायी जाती हैं। इस क्षेत्र में चट्टानों का संयोजन, ''कगार एवं घाटी'' स्थलाकृति के रूप में पाया जाता है जो कि उत्तर से दक्षिण की ओर विस्तृत हैं। पश्चिमी भाग में प्रवाह प्रणाली विशेषतया ट्रेलिस अथवा समानान्तर प्रकार की है, जिसमें सहायक नदियां, मुख्य नदी से लम्बवत् आकर मिलती हैं।

बरेल समूह की चट्टानें राज्य के पूर्वी भाग में पायी जाती हैं। इन चट्टानों को सूरमा समूह की चट्टानों से आसानी से अलग किया जा सकता है। पूर्वी भाग में प्रवाह प्रणाली मुख्यतया, पादपकार होती है, जिसमें सहायक नदियां, मुख्य नदियों से वृक्ष की शाखों की तरह मिलती हैं। एक अन्य विशेषता के अन्तर्गत, पूर्वी भाग में असमान रूप से अपरदित पर्वतों की बहुलता है। राज्य के उत्तर–पूर्वी म्यांमार सीमान्त क्षेत्र में उत्तर से दक्षिण की ओर विस्तृत समानान्तर पर्वत श्रेणियों की बहुलता है, जिनके बीच में संकरी घाटियां हैं। इस संरचना का कारण कठोर एवं कोमल चट्टानों का प्रत्यावर्तन है। यह चट्टानें बरेल समूह का अंश हैं।

उपसंहार

मिज़ोरम, त्रिपुरा मिज़ोरम वृहद भूसंन्नति का भाग है एवं ''आसाम–आराकन'' भूसन्नति का संभाग तथा यह समस्त क्षेत्र भारतीय एवं बर्मी प्लेट संपर्क प्रभाव के अंतर्गत गतिमान है। इस वृहद भूसन्नति में प्रमुखतया मोलासे प्रकार के अवसादी शैलों की प्रचुरता है। यहाँ की चट्टानें आसाम की तृतीयक महाकल्प के बरेल एवं सूरमा कल्प के ''भुबन संस्तर'' का प्रतिनिधित्व करती हैं। मिज़ोरम की चट्टानों में बलुआ–पत्थर, शेल एवं मृदा–पत्थर, प्रमुखतया बलुआ संस्तर एवं मृदा संस्तरों के पुनरावृत्तीय चक्र की बहुलता है जो कि उत्तर उत्तर पश्चिम–दक्षिण दक्षिण पूर्व की दिशा में लम्बवत विस्तृत असममित अपनतियों एवं अभिनतियों का निर्माण करती हैं।

मिज़ोरम द्रोणी से संलग्न ''भारत–म्यांमार गतिमान पट्टिका'' में वृहद स्तर के वैवर्तनिक प्रभाव के कारण, इस क्षेत्र में उग्र संरचनात्मक गतिविधियां, सदैव सक्रिय रही हैं। फलस्वरूप, द्रोणी में अनेक भ्रंश पाये जाते हैं। यह गतिविधियां मायोसीन काल तक अत्यंत उग्र रही हैं। ''भारत–म्यांमार चाप'' के अन्तर्गत नागालैंड–मणिपुर, त्रिपुरा–मिज़ोरम, अराकान–योमा एवं सुदूर दक्षिण में अंडमान–निकोबार द्वीप आते हैं। इन्हीं भूगर्भिक गतिविधियों के कारण, समस्त क्षेत्र भौकंपीय रूप से सक्रिय है। उत्तर–पूर्व में, मणिपुर–म्यांमार एवं मिज़ोरम का सीमान्त क्षेत्र भौकंपीय दृष्टि से सर्वाधिक सक्रिय है। नागा–दिसंग, डॉकी, सिलथेट, एवं कोपिली भ्रंश भूकंपजनक हैं।

भूकंप की आपदा के अतिरिक्त भूस्खलन की समस्या का समाधान अत्यन्त आवश्यक है। मिज़ोरम की चट्टानों का कोमल स्वभाव, अत्यधिक वर्षा, अधिक ढाल–प्रवणता, विवर्तनिक गतिविधियां, आदि के सम्मिलित प्रभाव के फलस्वरूप, भूस्खलन की घटनाओं की बारंबारता, एक वृहद् सामाजिक समस्या का रूप ले चुकी है। सामरिक दृष्टि से भी दो देशों के बीच स्थित इस क्षेत्र के समग्र आधारभूत एवं चिरस्थायी विकास हेतु विशेष अध्ययन एवं शोध की आवश्यकता है।

मौसम परिवर्तन एक प्राकृतिक चक्र या मानवीय

पी.एस. नेगी
वा.हि.भूवि.सं., देहरादून

मौसम परिवर्तन एवं वैश्विक तापमान वृद्धि वर्तमान पर्यावरणीय परिपेक्ष्य में मानव सभ्यता हेतु गम्भीर चिन्ता का विषय बन कर उभर रहे हैं। वैज्ञानिक एवं गैर वैज्ञानिक वर्ग जलवायु परिवर्तन के सम्भावित कारणों, उनसे होने वाली समस्याओं एवं उनसे बचने व क्षति कम करने के उपायों को ढूंढने में लगा है। विश्व के अधिकांश संस्थानों में हो रहे शोध कार्य वर्तमान जलवायु परिवर्तन व तापमान वृद्धि को मानवीय कार्यकलापों का परिणाम मान रहे हैं किन्तु लगभग 5 अरब वर्ष पूर्व पृथ्वी के अस्तित्व से लेकर सम्पूर्ण भू–गर्भीय समय मापक्रम पर यदि नजर दौड़ाई जाय तो स्पष्ट होता है कि जलवायु परिवर्तन का प्राकृतिक चक्र इस पृथ्वी पर मानव के अवतरण के पूर्व से ही अनवरत चलता आ रहा है। मानव विज्ञान के अनुसार मानव का पृथ्वी पर उद्भव पाषाण काल के दौरान लगभग 25 लाख वर्ष पूर्वमानवी पूर्वज के रूप में हुआ था एवं लगभग 20,000 वर्ष पूर्व ही मानव दुनिया के विभिन्न भागों में पहुंच पाया था। वैज्ञानिकों का विश्वास है कि आदि मानव लगभग 2 लाख वर्ष पूर्व अफ्रीका महाद्वीप में पैदा हुआ। जबकि विश्व की पहली मानव सभ्यता के अवशेष दक्षिण इराक के सुमेर नामक स्थान पर ईसा से 4000–3000 वर्ष पूर्व के चिन्हित किये गये हैं। विश्व के वैज्ञानिक व चिन्तक मानते हैं कि इंसान ने प्रकृति में अधिकांश हस्तक्षेप वर्ष 1760–1840 की औद्योगिक क्रान्ति के दौरान उत्पन्न प्रदूषण व अवैज्ञानिक कार्यकलापों द्वारा किया है इस सर्वाधिक हस्तक्षेप की अवधि का इतिहास भी वर्तमान से मात्र 254 वर्ष पुराना ही है। वैज्ञानिक परीक्षणों से स्पष्ट है कि जलवायु परिवर्तन का इतिहास मानव सभ्यता से कई गुना पुराना है तो फिर क्या मानवीय कार्यकलापों को जलवायु परिवर्तन हेतु जिम्मेदार माना जा सकता है? बल्कि यह कहा जा सकता है कि भूगर्भीय मापक्रम के हिसाब से प्रकृति में मानवीय हस्तक्षेप की अवधि नगण्य है। आग के दहकते गोले से लेकर सामान्य जीव–जन्तुओं हेतु अनुकूल जलवायु परिवर्तन तक का सफर भी पृथ्वी ने बिना किसी इंसानी क्रियाकलापों के हस्तक्षेप से ही पूरा किया है तो आज जलवायु परिवर्तन का स्थानीय, आंचलिक एवं अर्न्तराष्ट्रीय स्तर पर इतना हाय–तौबा क्यों मचा है? क्या कुछ वैश्विक संस्थायें जलवायु परिवर्तन हेतु तथा कथित जिम्मेदार क्रिया कलापों पर प्रतिबन्ध घोषित कर विकासशील देशों के विकास का पहिया मन्द करना चाहते हैं ?

चित्र –1 से भी स्पष्ट है कि भू–गर्भीय समय क्रम के विभिन्न काल खण्डों जैसे इयोसीन, प्लायोसीन,

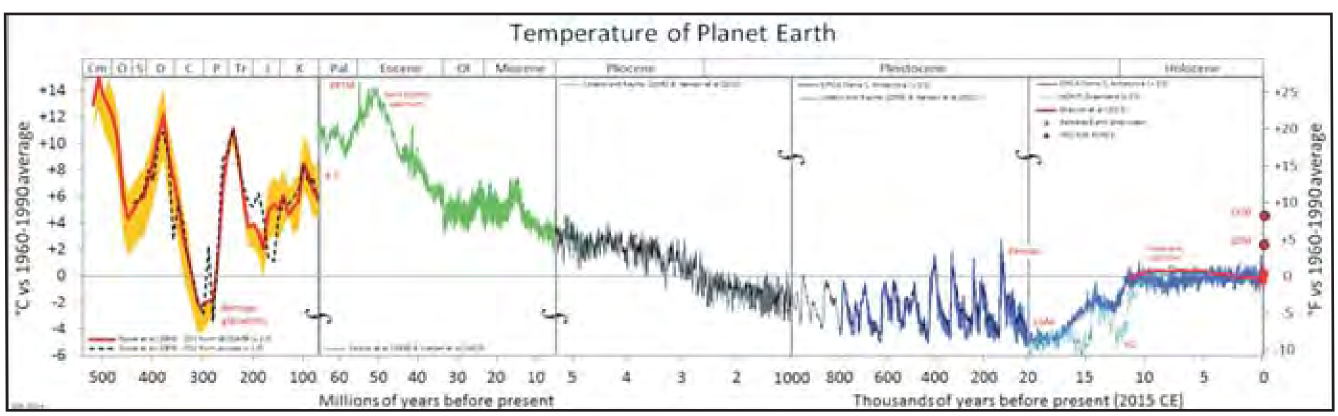

चित्र 1

प्लास्टोसीन एवं वर्तमान हौलोसीन तक (जिनका समय अन्तराल अरबो–करोड़ों–लाखों वर्ष से लेकर हजार वर्षों व वर्तमान समय के वर्ष 1960–1990 तक है) जलवायु के मुख्य कारक तापमान में हमेशा परिवर्तन हुआ है। ''वैज्ञानिकों द्वारा प्रतिवादित मिलानको विच चक्र'' भी यही सिद्ध करता है कि पृथ्वी पर कई बार जलवायु परिवर्तन चरमसीमा पर पहुंचा है जिससे सम्पूर्ण पृथ्वी कई बार बर्फ के गोले के रूप में तब्दील हो गई थी। कितनी बड़ी प्राकृतिक शक्तियां है जिसने पृथ्वी आग का गोला, बर्फ का गोला व पुनः जीवजन्तुओं के अनुकूल तापमान वाला पिण्ड बन गई थी जिसमें इंसानी दखलदांजी की कोई भूमिका नहीं है। जहां तक वर्तमान में मानवीय क्रियाकलापों से उत्तसर्जित गैसों द्वारा तापमान बढ़ाने का प्रश्न है तो शायद प्राकृतिक घटनाओं जैसे जंगल आग, भूकम्प व ज्वालामुखी सहित समुद्रतल, वन, कृर्षि क्षेत्र एवं प्रकृति में अन्य कार्बनिक–अकार्बनिक प्रक्रियाओं द्वारा उत्पन्न ग्रीन हाउस एवं अन्य हानिकारक गैसों के मुकाबले में मानवजन्य उत्पादन नगण्य होगा। उदाहरणार्थ केवल ज्वालामुखी को ही लें। पृथ्वी के जीवन काल में लाखों ज्वालामुखी फूटे होंगे। पिछले 10,000 वर्षो के इतिहास में लगभग 1500 ज्वालामुखी धरती पर सक्रिय हैं। जबकि पृथ्वी के 71% जलीय भू–भाग में भी अंसख्य ज्वालामुखी फटते । वर्तमान के प्रमाणिक इतिहास में लगभग 600 ज्वालामुखी सक्रिय माने जाते हैं जिनमें से 50–70 आज भी सक्रिय हैं। यह कहा जाता है कि पृथ्वी पर 20 ज्वालामुखी हर समय लाखों टन गैस, लावा, राख आदि का उत्सर्जन करते ही रहते हैं जो कि विश्व स्तर पर जलवायु परिवर्तन का कारण बन सकते हैं। फिलीपीन्स देश में वर्ष 1991 में माउन्ट पीनाट्यूबो ज्वालामुखी (चित्र–2) विस्फोट ने लाखों टन गैस का उत्सर्जन कर वातावरण के तापमान को काफी कम कर दिया था । चित्र–3 में पीनाट्यूबो व एलचिकोन नामक ज्वालामुखी द्वारा उत्सर्जित गैसों के प्रभाव से वर्ष 1979–2010 के दौरान तापमान में आये बदलाव को प्रस्तुत किया गया है एवं साथ में एलनीनो का प्रभाव भी दृष्टिगोचर है। इसी प्रकार वर्ष 1815 में जावा के

चित्र 2

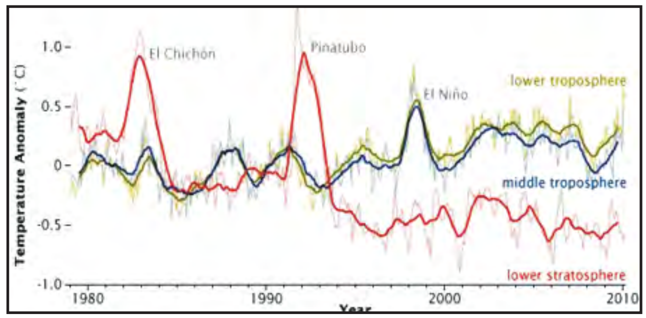

चित्र 3

टामबोरा व वर्ष 1883 में इन्डोनेशिया के क्राकेटाऊ ज्वालामुखी द्वारा इतनी गैसों का उत्सर्जन हुआ कि पृथ्वी की सतह का तापमान तीन वर्षो तक 1.3 डिग्री सेन्टीग्रेड कम हो गया। वर्ष 1783–1784 में आइसलैन्ड के लाखी ज्वालामुखी से निकले गैस व राख से सम्पूर्ण यूरोप व उत्तरी अमेरिका का तापमान 3 वर्षों के लिये 1 डिग्री सेन्टीग्रेड कम हो गया था ।

वैश्विक स्तर को छोडकर यदि स्थानीय स्तर पर भी जलवायु कारकों का अध्ययन किया जाय तो लघु समय में भी विभिन्नता पाई गई है। चित्र 4 में उत्तर पश्चिमी हिमालय क्षेत्र के देहरादून स्थान के आकड़ों से स्पष्ट है कि 75 वर्षों (1931–2006) के दौरान वर्षा में भी विभिन्नता पाई गई है जो कि वैश्विक स्तर पर तापमान परिवर्तन का मानसून की तीव्रता पर प्रभाव का प्रतिफल है। इसी स्थान के शीतकालीन व ग्रीष्म कालीन तापमान के आकड़ें भी चित्र 5 व 6 में प्रदर्शित कर दिये गये हैं जो कि वर्षा के आकड़ों की तरह

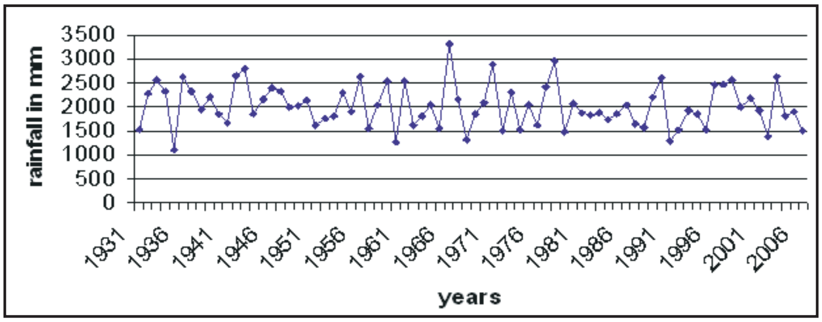

चित्र 4

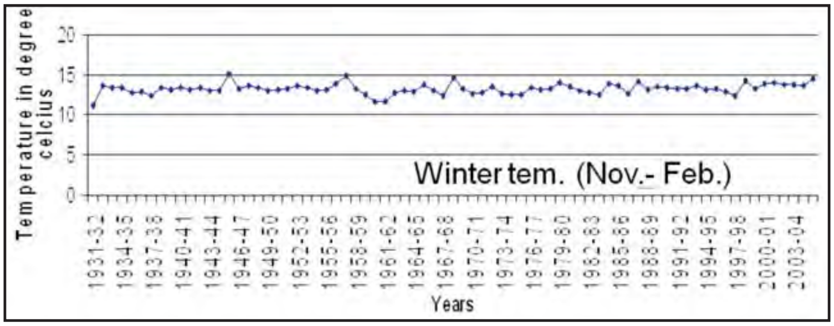

चित्र 5

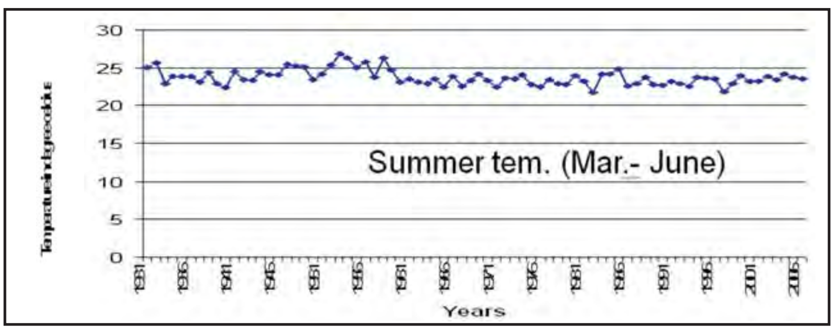

चित्र 6

वैश्विक स्तर पर तापमान में विभिन्नता इंगित कर रहे हैं। दुरूह एवं विषम भौगोलिक परिस्थितियों वाले क्षेत्र हिमालय में जहां मानवीय हस्तक्षेप नगण्य है फिर भी प्राकृतिक रूप से जलवायु परिवर्तन के कारण ग्लेशियर पिघल रहे है एवं वृक्ष रेखा अधिक उंचाई की तरफ बढ़ रही है। चित्र 7 में गंगोत्री ग्लेशियर एवं इस घाटी में वृक्ष रेखा की स्थिति प्रदर्शित की गई है। विश्व के सम्पूर्ण पर्वतीय क्षेत्रों में वृक्ष रेखा के बढ़ने एवं धरती पर बनीकरण से वातावरण में अधिकाधिक कार्बन डाईआक्साइड का विघटन होकर आक्सीजन का उत्पादन व कार्बन पेड़–पौधे के रूप में संग्रहीत होता है। तथाकथित वैश्विक तापमान वृद्धि की धारणा को हिमालय परिस्थिति तंत्र आज भी स्वीकार नहीं करता। हिमालय क्षेत्र के ग्लेशियर व नदियां भी एक समान व्यवहार नहीं कर रहे हैं। एक ओर 75% ग्लेशियर सिकुड़ रहे हैं, किन्तु 8% प्रतिशत फैल रहे हैं तथा 17% ग्लेशियर स्थिर हैं। वहीं दूसरी ओर कुछ नदियों में जल उत्सर्जन बढ़ रहा है तथा कुछ में घट रहा है। जलवायु कारक जैसे तापमान व वर्षा आदि भी लघु एवं दीर्घकालिक रूप से तापमान वृद्धि प्रदर्शित नहीं रहे हैं ।

चित्र 7

उपरोक्त प्रमाणों से स्पष्ट होता है कि पृथ्वी पर जलवायु परिवर्तन व वैश्विक तापमान वृद्धि का कारण मानवीय गतिविधियां नहीं बल्कि स्वयं प्रकृति एवं उसके कारक हैं जिनका वर्णन निम्नवत है। मूल रूप से प्राकृतिक कारकों जैसे तापमान, वर्षा, आद्रता, सूर्य प्रकाश, हवा आदि में लम्बे समय के लिये बदलाव जलवायु परिवर्तन माना जाता है। उक्त कारक पृथ्वी के बाह्य कारकों जैसे सूर्य उष्मा, अन्य ग्रहों से ज्यामिति, वातावरण में उपस्थित ठोस–गैस–तरल पदार्थ कण आदि के साथ–साथ पृथ्वी के अपने आन्तरिक कारकों से संयुक्त रूप से प्रभावित होते हैं। पृथ्वी के आन्तरिक जलवायु कारकों में प्रमुख रूप से ज्वालामुखी, पर्वत निर्माण, महाद्वीपीय स्थिति बदलाव, वातावरण–जल–धरती में उष्मा का आदान–प्रदान, वातावरणीय रसायन व परवर्तकता आदि शामिल हैं। जलवायु परिवर्तन के प्रमुख प्रभावों में से समुद्रतल बढ़ना, ध्रुवीय बर्फ–ग्लेशियर एवं परमाफ्रस्ट का पिघलना, वातावरण–समुद्री सतह में के तापमान वृद्धि, अतिवृष्टि–अनावृष्टि, परिस्थतिकीय असन्तुलन, एवं समुद्री तूफान में वृद्धि, आदि माने जाते हैं।

यद्यपि मौसम परिवर्तन एक प्रकृति जन्य सतत प्रक्रिया है जिसको प्रकृति का नियम भी कहते हैं। फिर भी प्रकृति के साथ पर्यावरण सम्भवतः कार्यकलापों द्वारा सतत विकास के साथ–साथ परिस्थितिकी को भी संरक्षित रखा जा सकता है। इस संदर्भ में राष्ट्र पिता महात्मा गांधी का कथन ''इस पृथ्वी पर इंसान की आवश्यकता पूर्ति के लिये तो सब कुछ है किन्तु लालच के लिये कुछ नहीं है'' सार्वभौमिक एवं समसामयिक सिद्व होता है।

(नोट : प्रस्तुत आलेख स्वयम् के अनुभव, क्षेत्र सर्वेक्षण व विभिन्न प्रकाशित शोध कार्यों व तथ्यों के आधार पर तैयार किया गया है।)

जीवनचर्या आधारित रोग–अवसाद

कौमुदी जोशी, भा.भू.सं., भुवनेश्वर (उड़ीसा)
सुरेश चन्द्र जोशी, जी.बी.पी.आई.एच.टूडी., श्रीनगर (गढ़वाल)

अधरम् मधुरम् वदनम् मधुरम्
मधुराधिपते अखिलम् मधुरम्

श्रीमद् बल्लभाचार्य रचित इस भजन गीत को गुनगुनाते समय हमारी जो मनोदशा होती है वही मनोदशा वास्तव में सामान्य जीवन में होनी चाहिए। मधुरता से जीवन जीने का मध्यम मार्ग ही उत्तम है परहम में से अधिकतर लोग तनाव ग्रस्त उदासीनता ग्रस्त परेशान हाल, क्रोध ग्रस्त, मोह ग्रस्त आदि रहते हैं जो जीवन की गुणवत्ता को जीवन से हटाकर धीरे– धीरे एक मजबूरी बनाकर रख देता है। अति खुशी या अति दुःख की भावना अन्ततः जीवन को अवसाद ग्रस्त कर देती है। सबसे ज्यादा आश्चर्यजनक एवं दुःखदायी बात यह है कि विश्व स्वास्थ्य संगठन की रिपोर्ट के अनुसार सबसे ज्यादा अवसाद ग्रस्त लोग भारत में हैं तथा स्त्रियाँ पुरूषों की तुलना में ज्यादा अवसाद ग्रस्त हैं। इसका कारण शायद हमारा अपनी परम्पराओं के विरूद्व प्रगतिवादी बनने की होड़ है। नयी परिस्थितियां नयी समस्याओं को जन्म देती हैं और हम संवाद के अभाव में स्वयं को अपराधी मान जीवन सामन्जस्य खो बैठते हैं। अतः मानसिक स्तर पर स्वास्थ्य एक महती आवश्यकता है। इसे एक साधारण उदाहरण से समझा जा सकता है जैसे लहसुन प्याज न खाने वाले परिवार का एक आदमी लहसुन प्याज का सेवन करने के कारण स्वयं को पूर्वजों से, अपनी जड़ों से, कटा मान सकता है। मानसिक स्तर पर इस भावना के कारण तनाव उत्पन्न हो सकता है, तथा इस तरह के छोटे–छोटे कुछ तनाव मिलकर आदमी को अवसाद ग्रस्त बना सकते हैं। वर्ष 2015 के शुरू में हुई घटना को याद करें जब जर्मनविंग के दो–पायलट एड्रियाजलूबिट्ज ने 150 यात्रियों सहित अपने जहाज को फ्रेन्चआल्प्स में टकराकर नष्ट कर दिया। इसी तरह ऊँचे पदों पर बैठे अवसाद ग्रस्त व्यक्तियों, शिक्षकों, अधिकारियों, कारपोरेट जगत के मसीहाओं के बारे में सोचें तो साधारण जन के कष्टों का ज्ञान होता है जिनको बिना कसूर किसी दूसरे के अवसाद ग्रस्त होने का दंड भुगतना पड़ता है।

अमेरिकन नेशनल इन्स्टीट्यूट की रिपोर्ट के अनुसार तनावग्रस्त व्यक्ति में निम्नलिखित लक्षण उत्पन्न हो जाते हैं।

- लगातार दुःखी परेशान या रिक्त मनः स्थिति
- अनुकूल परिस्थिति प्राप्त करने हेतु आशाहीनता, निराशावादी द्वष्टिकोण,
- अपराधी भाव या महत्वहीनता का भाव
- किसी भी कार्य अथवा शौक से खुशी एवं सुख की अनुभूति न होना या मन न लगना
- शक्ति का कम होना या थकान का हावी रहना
- किसी कार्य में मुश्किल से ध्यान लगना, चीजें याद न आना अथवा निर्णय लेने में कठिनाई।
- नींद लेने में मुश्किलें या ज्यादा सोना
- भूख तथा/अथवा शारीरिक भाव में परिवर्तन
- आत्महत्या या मृत्यु का ख्याल आना या आत्महत्या प्रवृत्ति
- सिर में लगातार दर्द, पेट की तकलीफें एवं मांसपेशियों में दर्द

अवसाद आज एक प्रमुख दिमागी बीमारी है। भारत में तो अभी भी लोग अवसाद ग्रस्त होने पर इसे छिपाने की कोशिशें करते हैं। आवश्यकता है कि हम भी पश्चिमी देशों की तरह इसमें चर्चा करें तथा विशेषज्ञ की राय लें। अवसाद के समय मनुष्य हीनभावनाओं से ग्रस्त हो जाता है। उसे कुछ समझ नहीं आता है कि

वह क्या करे और क्या न करे। आशा की किरण नजर न आने के कारण विश्व में लगभग दस लाख लोग हर साल मृत्यु का वरण कर लेते हैं अर्थात तीन हजार आत्महत्याएं प्रतिदिन।

अतः इस बीमारी का पता जितनी जल्दी चल जाय उतना ही अच्छा है। अवसाद से ग्रसित आदमी को पता ही नहीं चलता, उसे उदासीनता है। जीवन चर्या के कठिन होने पर यह उदासीनता धीरे–धीरे अवसाद का रूप ले लेती है। कभी–कभी उदासीन व्यक्ति स्वयं ही भूत या भविष्य की चिन्ताएं ओढ़ लेता है तथा दिमागी बोझ को बढ़ा लेता है। साधारण जनता की तो छोडिये, जिन्हें पता ही नहीं लगता कि वे अवसाद में जी रहे हैं, पढ़े लिखे समझदार उच्च पदासीन लोग भी अवसाद का ठीक से इलाज नहीं कराते या नहीं कराना चाहते, क्योंकि उन्हें डर होता है कि इस प्रक्रिया के कारण कहीं उनके प्रमोशन इत्यादि में या साधारण मान पर असर पड़े।

अतः इसके उपाचारार्थ का सही सदुपयोग एक मूल मंत्र है। भूत–भविष्य की चिन्ताओं से मुक्त रहना, वर्तमान में स्वयं का पूर्ण उपयोग करना तथा खुश रहना एक आवश्यक अंग है। कोई भी कार्य ऐसा नहीं करना चाहिए जिससे मन मष्तिष्क में ग्लानि रहे। नकारात्मक विचारों को मन में नहीं आने देना चाहिए तथा सकारात्मक विचारों का यथा सम्भव पालन पोषण करना चाहिए। योग व प्राणायाम से, व ध्यान से काफी हद तक समस्याओं को कम किया जा सकता है। पैदल घूमना, शारीरिक श्रम व शारीरिक व्यायाम से इस रोग को मात दी जा सकती है। अपने शरीर के अनुसार उपयोगी एवं स्वस्थ भोजन सामग्री का चयन करके इस रोग को मात दी जा सकती है।

स्वस्थ रहकर कोई भी काम आसानी से किया जा सकता है इसलिए अपनी सेहत पर अवश्य ध्यान दिया जाना चाहिए। इसमें एक उम्र के पश्चात नियमित चिकित्सकीय परीक्षण भी शामिल हैं। शारीरिक निष्क्रियता एवं व्यायाम की कमी से जीवन शैली आधारित अन्य रोगों के होने का भी खतरा रहता है जैसे मधुमेह, हदय रोग, स्ट्रोक, मोटापा उच्च रक्तचाप आदि। स्वस्थ जीवन शैली अपनाने के लिए जितना तनाव व चिन्ता से दूर रहने की आवश्यकता है उतना ही व्यसनों से भी दूर रहने की आवश्यकता है। धूम्रपान, शराब, गुटखा, तम्बाकू, नशीली दवाओं के सेवन से यथाशक्ति दूर ही रहना चाहिए।

मानसिक स्तर पर दुःखों का एक बड़ा कारण दूसरे के साथ स्वयं को तोलना है। इस कारण उत्पन्न हुई खीझ, चिन्ता, भय, व्याकुलता निराशा मनुष्य को कहीं का नहीं छोड़ती है। प्रकृति में तो तुलना है ही नहीं, जो जैसा भी है पूर्ण रूप में स्वयं में श्रेष्ठ है। कौवा हो या हंस स्वयं में परिपूर्ण है। मनुष्य के मन की तुलना ने पूरी मनुष्यता को एक गहन दौड़ में परिवर्तित कर दिया है। ज्ञान, शक्ति, धन, प्रतिष्ठा, कुशलता, साधन सम्पन्नता के क्षेत्र में सर्वश्रेष्ठता प्राप्त करने की मनुष्य की चाहत तो समझ में आती है पर गुण, धर्म, साम्प्रदायिकता, त्वचा का रंग, आखें व बाल का रंग अर्थात न जाने कितने और किन–किन विषयों में तुलना कर मनुष्य स्वयं में श्रेष्ठता हासिल करना चाहता है ताकि दूसरे को हीन महसूस कराया जा सके। जो लोग इन बातों को गम्भीरता से लेने लगते हैं उन्हें अवसाद स्वाभाविक है क्योंकि गुण–दुर्गुणों का कोई आदि–अन्त नहीं है। सबसे उत्तम नीति भारतीय ज्ञान है जो कहता है "सर्वे भवन्तु सुखिनः सर्वे सन्तु निराभया, सर्वे भद्राणि पश्यन्तु या कश्चित! दुःखभागभवेत्"। एक अन्य नियम भी है जो कहता है अपने कार्य को यथा सम्भव दक्षता से करना चाहिए ताकि पश्चाताप न रहे। एक अन्य महत्वपूर्ण नियम है आध्यात्म्वाद। आध्यात्म् की तरफ झुकाव से भी काफी हद तक समस्याओं का समाधान हो सकता है, क्योंकि आध्यात्म का लक्ष्य ही मनुष्य के अन्दर छिपी शक्तियों एवं सत्प्रवृत्तियों को मनावैज्ञानिक तरीके से इतना आगे बढ़ाना है कि व्यक्ति के जीवन में देवत्व छलकने लगे।

उम्र के अनुसार शरीर की भोजन सम्बन्धी आवश्यकताए भी बदलती रहती हैं। हम भोजन को केवल उदरपूर्ति का साधन मानकर ग्रहण करते हैं तो

वो आत्मिक शान्ति व आनन्द प्रदान नहीं करता। अन्न के हर एक निवाले को शान्तिपूर्वक प्रेम से ग्रहण करना चाहिए इससे वो सुख एवं स्वास्थ्य देने वाला हो जाता है। कहा जाता है कि वस्त्र दूसरे की पसन्द का एवं भोजन अपनी पसन्द का करना चाहिए। कहते हैं जैसा खाये अन्न वैसा होवे मन। प्रकृति ने हमें वनस्पति के रूप में कई सारे वरदान दिये हैं। कुछ शाक सब्जियां तो शारीरिक व्याधियों में रामबाण का कार्य करती हैं। कुछ किस्म के डायटरी फाइबर तो केवल पौधों से ही प्राप्त होते हैं। ये फाइबर ब्लड कोलेस्ट्राल को कम करते हैं तथा डायबिटीज जैसे रोगों से बचाव भी करते हैं। संतुलित आहार लेने से शरीर को सभी तत्व आवश्यक मात्रा में मिलते हैं एवं मनुष्य स्वस्थ, बलशाली व बुद्विमान बनता है। यही कारण है कि शाकाहार आज पूरी दुनियाँ में ट्रेन्ड के रूप में उभर रहा है, जिसके पीछे एकमात्र कारण मांसाहार से उपजने वाली कई बीमारियों से मुक्ति पाना है। बीमारियों से उत्पन्न दु:ख के कारण अवसाद में चले जाना एक आम घटना है। दैनिक जीवनचर्या में साधारण बदलाव से यदि स्वास्थ्य प्राप्त हो सकता है तो सभी को यह प्रयोग पूरी निष्ठा से एक बार जरूर करना चाहिए।

हिमालय की उत्पत्ति : कुछ संशय, कुछ सुझाव

अशोक दुबे
60/4, मोहित नगर, देहरादून

हिमालय पर्वत प्रकृति की एक अनूठी रचना है जिसका निर्माण भारतवर्ष के लिये अनन्य वरदान की तरह है। तीसरा ध्रुव, सदा नीरा नदियां, घने जंगल, विविध जीव–जन्तु, अनेकों जड़ी–बूटियां और शीतल वातास। यदि हिमालय नहीं होता तो मानसून भी नहीं होता और प्यासी धरा पर रेगिस्तान की तरह सिर्फ कीड़े – मकोड़े ही होते। साइबेरिया से आने वाली बर्फीली हवा को यदि हिमालय नहीं रोकता तो विकट ठण्ड में उत्तर भारत में जीना मुहाल हो जाता। जाहिर है इन्हीं विशेषताओं के कारण हिमालय पर वैज्ञानिक शोध पर भी पूरा ध्यान दिया गया है। देश और विदेश के शोधकर्ताओं में जीवविज्ञान वाले भी हैं, वनस्पति विज्ञान वाले भी, जलविज्ञान वाले भी, वायुमण्डलीय विज्ञान वाले भी और भूविज्ञान वाले भी। इनमें शायद सबसे कठिन कार्य भूविज्ञान वालों का ही है आमतौर पर दूसरे विज्ञानों में प्रयोग से परिणाम की ओर जाते हैं मगर भूविज्ञान में प्रयोग तो प्रकृति ने कर लिया है और परिणाम हमारे सामने है। अब इस परिणाम से हमें उन प्रक्रियाओं को समझना है जो क्रियान्वित हो चुकी हैं। जटिलता यह है कि इनका क्रियाकाल भी कोई छोटा–मोटा सौ–दो सौ साल का नहीं वरन करोड़ों वर्षो में है। अब इतने लम्बे अंतराल में जो कुछ घटित हुआ है उसे समझना कोई आसान काम तो नहीं। भू–भौतिकी से प्राप्त आंकड़ों का विवेचन तो और भी दुष्कर है। पृथ्वी के गर्भ में जो परिलक्षित नहीं है उसे समझने के लिये जो प्रयास हुए हैं उनमें अनेकों प्रश्न अनुत्तरित रह गए हैं। दुख की बात तो यह है कि जो माडल हम अपना रहे हैं वह हमारे मौलिक नहीं हैं वरन विदेशी माडलों का अनुसरण है। मुख्यतः आल्प्स, स्कॉटिश हायलैण्ड और कैनेडियन राकीज में जो माडल प्रस्तावित किये गए थे उन्हीं को हम येन–केन–प्रकारेण हिमालय में फिट करने का प्रयास कर रहे हैं। नतीजे में नई–नई समस्याएं पैदा हो रही हैं और नए–नए संशय उत्पन्न हो रहे हैं। हां, कुछ प्रक्रियाएं अवश्य ऐसी हैं जो विश्व की समस्त पर्वतमालाओं में पाई जाती हैं, जैसे

1. पर्वत श्रेणियों की वक्रता
2. विवर्तनिकी उपविभाजन (अग्रभूमि में अवसादी शैल, निम्न या पादप में कायांतरी–अवसादी शैल तथा क्रोड में उच्च क्रम कायांतरी शैल)
3. पूर्व तथा सम पर्वतनी कायांतरण
4. वलन ओर क्षेप पट्टी (बेल्ट)
5. पूर्ववर्ती तथा अध्यारोपित विवर्तनिकी
6. भ्रंशों का पुन– सक्रियण
7. पर्वत तल में डिकोलमेंट समतल की उपस्थिति

उपरोक्त को दृष्टिगत रखते हुए हमें उन लक्षणों की ओर विशेष ध्यान देना होगा जो सिर्फ हिमालय की विशेषताएं हैं जैसे

- पूर्व में की गई गभीर भूकम्पी परिज्ञापन प्रोफाइल (कैला एवं अन्य, 1978) में कई ऊर्ध्वाधर भ्रंश दर्शाए गए हैं जिनमें डिकोलमेंट समतल अनुपस्थित है। सन् सत्तर और अस्सी के दशक में विदेशी पर्वत मालाओं में जो अनुसंधान हुआ उसके पश्चात हिमालय में एक दूसरा अनुप्रस्थ काट दिखाया गया जिसमें एक डिकोलमेंट समतल से सभी प्रमुख क्षेप भ्रंश निकलकर सतह की ओर संचरण कर रहे हैं (एलोग्री एवं अन्य, 1984)। यहां यह ध्यान देने योग्य है कि डिकोलमेंट समतल से नीचे भी भूकम्पीय गतिविधियां जारी हैं (डे एवं कायल, 2003)।
- सतह से ऊपर और नीचे जो संरचनाएं दिखाई गई हैं उनमें सामंजस्य बैठाना संभव नहीं है। जो संरचनाएं सतह के नीचे होने से दिखाई नहीं देतीं उन्हें निकुंच बेण्ड ज्यामिति द्वारा दर्शाया गया है

जिनमें द्वितीय कोटि वलन दृष्टिगोचर नहीं होते (पावर्स एवं अन्य, 1998)। इस तरह की ज्यामिति सर्वप्रथम केनेडियन राकीज में दिखाकर अनुप्रस्थ काट का अविरूपित पुनर्निर्माण किया गया था (डालस्ट्रॅाम, 1969)। हिमालय में किसी तरह जोड़–तोड़ बैठाई तो गई है मगर समस्या यह है कि जो वलन सतह पर दिखाई देते हैं वह स्पष्ट रूप से गोलाकार प्रोफाइल वाले और द्वितीय कोटि के वलन हैं। पृथ्वी के गर्भ में ताप–दाब की विभिन्न दशाएं होने के कारण संरचनाएं भिन्न रूप दर्शा सकती हैं मगर सतह के आरपार इतना परिवर्तन मान्य नहीं हो सकता।

- हिमालय में क्षेप भ्रंशों की आधार भित्ति में भी विरूपण पाया जाता है जो कैनेडियन राकीज में अनुपस्थित है।
- हिमालय के अधिकांश विकृति आंकड़े द्वि–आयामी अनुप्रस्थ काटों पर आधारित हैं। पूर्ववर्ती तथा अध्यारोपित वलनों के साथ उनका संभावित संबंध स्थापित नहीं किया गया है।
- हिमालय–पूर्व कायांतरण स्थापित तो हो गया है मगर इसके विस्तृत विवेचन पर कार्य किया जाना बाकी है।
- हिमालय की पर्वत श्रेणियां कश्मीर से अरूणाचल तक चापाकार में फैली हुई हैं। चूंकि समस्त संरचनाएं संपूर्ण क्षेत्र में एक समान ज्यामिती दर्शाती हैं इसलिये यह आकार द्वितीयक नहीं वरन प्राथमिक होना चाहिये। हिमालय – पूर्व द्रोण विन्यास इस विषय पर और प्रकाश डाल सकता है।
- सभी प्रमुख क्षेप भ्रंशों पर मेटाबेसिक शैल क्यों पाई जाती हैं ?
- प्लेट विवर्तनिकी माडल के अनुसार भारतीय प्लेट उत्तर दिशा की ओर संचरण करती हुई तिब्बत प्लेट के साथ मिलकर संपीड़न कर रही है मगर अध्यारोपित वलन पूर्व – पश्चिम क्षेत्रीय तल में मुख्य संपीड़न दर्शाते हैं।
- पूरा दक्षिण पर्वतीय क्षेत्र भूकम्पीय आपदाओं से प्रभावित है। यह भूकम्प क्षेप, प्रसामान्य तथा नतिलंब सर्पण भ्रंशों से उत्पन्न हुए हैं। चूंकि इन तीन प्रकार के भ्रंशों की क्रियाविधि अलग–अलग है इसलिये भूकम्पीय उत्पत्ति की असली खोज अभी जारी रहनी चाहिये।
- वैक्रिता क्षेप के दोनों तरफ की चट्टानें दर्शाती हैं कि तरूण शैल उपरिभित्ति में हैं तथा पुराने शैल समूह आधार भित्ति में। यह स्थिति प्रतिलोमन विवर्तनिकी की तरफ इंगित करती है। इस दिशा में एक माडल दुबे (2014) द्वारा प्रस्तुत किया गया है जिससे कई समस्याएं हल हुई हैं।
- हिमालय के उत्थान में क्षेप भ्रंशों का विशेष महत्व है। आमतौर पर माना जाता है कि इन भ्रंशों पर 80 कि.मी. तक का विस्थापन हुआ है। विदेशी पर्वतमालाओं पर जहां भी इस परिमाण का विस्थापन बताया गया है वहां भ्रंश सतह पर कोई स्नेहक स्तर पाया गया है जैसे नमक, जिप्सम, ग्रेफाइट आदि। लघु हिमालय में जहां अधिकतम क्षेप विस्थापन प्रस्तावित किया गया है वहां इस तरह का कोई स्नेहक स्तर नहीं है। इसी को दृष्टिगत रखते हुए पाप–अप क्लिपे मॉडल सुझाया गया है। मसूरी और गढ़वाल अभिनतों में जो कार्य किया गया है उसे दूसरे क्षेत्रों में भी आजमाया जाना चाहिये।
- पामिर गांठ और हिमालय के आपसी संबंधों की विवेचना की जाना चाहिये।
- प्लेट विवर्तनिकी सिद्वांत कई विवर्तनिक पहेलियों का हल प्रदान करता है मगर सभी का नहीं। अतः इस सिद्वांत की क्रियाविधि को समझने का प्रयास किया जाना चाहिये। इस प्रयास में हमें अवश्य ही एक बेहतर सिद्वांत की प्राप्ति होगी जो न सिर्फ पृथ्वी वरन दूसरे ग्रहों की विवर्तनिकी को समझने में भी सहायता प्रदान करेगा।

और अंत में यह याद रहे "अभी तो मीलों हमको, मीलों हमको मीलों हमको चलना है"

तमसो मा ज्योतिर्गमय.....

अभिषेक मिश्र
शिरीष, यशवन्त नगर, माखम कॉलेज के निकट, झारखंड

आज पूरे 12 साल हो गये थे आनन्द को इस अंतरिक्ष स्टेशन पर। दुनिया के 5 चुनिंदा अंतरिक्ष यात्रियों में था आनंद जिसे एक विशेष प्रयोग के लिए चुना गया था। मिशन का उद्देश्य था अंतरिक्ष के अलग–अलग भागों में मानव की प्रकृति, व्यवहार, अनुकूलता आदि का अध्ययन करना। इस नीरव एंकात में, अकेलेपन का मस्तिष्क और शरीर पर क्या और कैसा असर पड़ता है, यह भी इस शोध का विषय था। इस कठिन और लगभग आत्मघाती मिशन पर भेजने के लिए न सिर्फ कड़ी चयन प्रक्रिया का पालन किया गया था बल्कि विजेताओं के परिवार के लिए उनकी अनुपस्थिति में अत्यंत आकर्षक पैकेज भी घोषित किए गये थे। उनकी वापसी तक न्यूयॉर्क के विशेष आवासीय परिसर में तमाम अद्यतन विश्व स्तरीय सुख–सुविधाओं के साथ आवास, सर्वश्रेष्ठ विद्यालय/महाविद्यालय में बच्चों की शिक्षा के अलावा, मनोरंजन–चिकित्सा आदि अन्य भौतिक सुख–सुविधायें किसी मायने में कम न थीं। अलग होते वक्त आनंद के दिल में विज्ञान के एक नये क्षेत्र में अपने योगदान को लेकर उत्सुकता थी तो आंखों में अपने परिवार के लिए सुनहरे भविष्य के सपने, उसके माता–पिता की आंखों में उससे बिछड़ने की करूणा थी तो पत्नी रेखा और बच्चों की आंखों में उसके जाने का दर्द तो झलक ही रहा था। नन्हें बच्चों को उनके पिता की नई जिम्मेवारियों का अहसास ही कहाँ था, मगर इतना जरूर पता था कि पापा लंबे समय के लिए कहीं जा रहे हैं। जाते वक्त आनंद आंखों से ओझल होने तक पीछे मुड़कर अपने परिवार को देखता रहा और आखिर में सब कुछ दूर किसी बिन्दु में सिमट गया।

सौर पैनल से संचालित यह छोटा सा स्पेस स्टेशन एक व्यक्ति की आवश्यकताओं के लिए पर्याप्त था। मिशन की समाप्ति पर योजनानुसार आनंद को एक अन्य अन्तरिक्ष यान लेने के लिए आता और यह स्टेशन अपनी शेष जीवन अवधि तक एक शक्तिशाली कैमरे के रूप में तस्वीरें खींचता मुख्यालय को भेजता रहता और एक दिन अंतरिक्ष में कहीं खो जाता।

स्पेस स्टेशन पर नई जिम्मेदारियों में आनंद जल्द ही काफी व्यस्त हो गया। अनन्त ब्रह्माण्ड में एक छोटे से कण से भी क्षीण सा यह अंतरिक्ष यान इस विराट सृष्टि में उसे अपनी लघुता का बोध कराता जा रहा था। यहां का एकांत उसे खुद से और जुड़ने की ओर बढ़ा रहा था। पीढ़ीगत धार्मिक संस्कार उसे आध्यात्मिकता की ओर ले जा रहे थे। पृथ्वीः शान्तिः...... अन्तरिक्षः शान्तिः..../वसुधैव कुटुंबकम.....जैसी ऋचाओं के अर्थ अब उसके सामने साकार दृश्यमान हो रहे थे।

3 माह में एक बार उसकी बात टेली–कॉन्फ्रेन्सिंग के जरिये अपने परिवार से भी हो जाती थी। उन कुछ क्षणों के लिए वह उनसे रूबरू हो पाता था। इस क्रम में उसने महसूस किया कि शुरू के कुछ महीनों तक तो उससे दूरी का जो अवसाद उसके परिजनों के चेहरे, उनके अलफाज से झलक रहा था वो धीरे–धीरे समय के साथ कम होता हुआ अब मात्र रस्मी ही रह गया है। आनंद समझता था कि वो अपने नये परिवेश में सुखी–संतुष्ट हैं और उसमें पूर्णतः खो चुके हैं। कभी कभी वो उनके चेहरों के कृत्रिम भावों के पीछे छुपी

सच्चाई को पढ़ने की कोशिश भी करता था कि क्या उन्हें उसकी फिक्र और जरूरत है भी। ऐसे किसी चिह्न का अस्तित्व भी न देख वो अपनी निराशा में खुद ही डूब जाता।

यहां दिन और रात उसके लिए बराबर ही थे। उसके आस–पास फैले ब्रह्माण्ड के अनेकानेक कण ही उसके संगी थे। वो उनसे एक अद्‌भुत आकर्षण महसूस करने लगा था। यह आकर्षण तो विज्ञान या शब्दों की सीमा से परे था। जाने क्यों यह गहन अंधकार उसे खुद से बातें करता हुआ सा लगता, खुद की ओर बुलाता हुआ सा......अनंत दूरी पर टिमटिमाते तारों को देख वो सोचता कि इनके अस्तित्व का कारण क्या है ? करीब से गुजरते किसी उल्का पिंड को देख वो सोचा करता कि क्या अपने मूल स्त्रोत से अलग होने की कोई पीड़ा उसे भी होती होगी! या वो अपनी नियति से संतुष्ट होंगे कि या तो अनंत में कहीं विलीन हो जाएं या संयोग से किसी वैज्ञानिक के हाथों में पड़ अंतरिक्ष के कुछ नये रहस्य उजागर करने में अपना योगदान दें या फिर अनजाने में जीवन के किसी सूक्ष्म अंश के ही वाहक बन जाएँ। इन्हीं सवालों में वह अपनी जिंदगी के सवालों के उत्तर भी तलाशने की कोशिश कर रहा था। इस अनंत ब्रह्माण्ड में अपने होने का उद्‌देश्य, उसकी सार्थकता..........

आज मुख्यालय से उसके लिए एक सूचना आई थी। इस परियोजना से जितने आँकड़े जुटाने थे–जुटाए जा चुके थे और अब इसे बंद किया जाना था। शीघ्र ही वह वापस धरती पर होगा–अपने स्वजनों के साथ एक सामान्य जीवन व्यतीत करता हुआ। उसे खुश होना चाहिये था–मगर क्या वो वास्तव में अंदर से खुश था ? या उसके मन–मस्तिष्क के किसी कोने में कुछ ऐसा चल रहा था जिसे वह समझ नहीं पा रहा था।

आज फिर उसकी रेखा से बात होने वाली थी। वह उसे यह खुशखबरी देना चाहता था। सोच रहा था कि उसकी प्रतिक्रिया क्या होगी ! क्या वो खुशी से उछल पड़ेगी, उससे फिर मिल पाने की संभावना उसे भावुक बना देगी? या........जाने क्या–क्या??? उसकी प्रतिक्रिया का वो क्या प्रत्युत्तर देगा! इतनी दूर से उसे स्पर्श कर कोई आश्वासन भी तो नहीं दे सकता था वो..

खैर, आखिरकार वो घड़ी भी आ गई जब स्क्रीन पर रेखा उसके सामने थी। वो खुशी से अपनी धुन में लगातार बोलता चला जा रहा था–रेखा सुनती जा रही थी। खामोश, कुछ खोई सी। आनन्द ने गौर किया–उसके सलोने चेहरे पर कई भाव आ–जा रहे थे। उसकी आंखे भी कुछ और ही कह रही थीं। क्या था उन आंखों में? कुछ उत्साह, कुछ बेचैनी, कुछ अनिश्चितता! आखिर क्यों? जल्द मिलने के वादों के साथ बातें समाप्त हो गई थीं, मगर कुछ अनुत्तरित प्रश्न अभी भी उसके ज़हन में उभर रहे थे। इन वर्षों में उसका परिवार भी तो उसके बिना रहना सीख गया होगा? किसी और का सहारा मिल गया होगा या शायद अब उन्हें किसी सहारे की जरूरत ही नहीं रह गई हो! उनके बीच खुद उसकी भी नहीं! कहीं ऐसा भी तो नहीं कि जिस जीवन–स्तर की उन्हें आदत हो गई है अब उससे समझौते की भी उन्हें चिंता सता रही हो! उसे कहीं सुनी ये पंक्तियां भी याद आ रही थीं कि बड़े–से–बड़े दुख से उबरने की भी एक समय सीमा होती है, और वह तो उनसे समय और दूरी की सीमाओं से भी कहीं आगे निकल आया था। उनके बीच जरूरत से ज्यादा बड़ा सवाल उसके खुद का भी था। उसके जीवन की दशा–दिशा यहां से आगे क्या और कैसी हो? इतने वर्ष उसने विज्ञान को दिये हैं, इस चरम एकांत में इतना वक्त बिताया है, अब क्या वो एक सामान्य जीवन जी भी पाएगा? कोई और भी विकल्प है क्या उसके पास? यह सोचता हुआ वो अपने अंदर ही कहीं खोता जा रहा था। आस–पास का समस्त अंधकार मानो उसके अंदर निर्मित हो गया हो–सारा अंधकार मानो उसके अंतस में ही सिमट आया हो–एक मंथन के लिए ही, जिसमें से शायद कोई प्रकाश की किरण निकल जाए! और शायद कुछ ऐसा ही हो रहा था उसके अंदर भी। एक ब्लैक होल ही मानो उसके अंदर निर्मित हो गया हो–सारा अंधकार, समस्त

ब्रह्मांड जैसे उसमें खोता जा रहा हो और वो उनमें। दोनों एक दूसरे में विलीन हो एकाकार हो गए हों जैसे, वो ब्रह्मांड में, अखिल ब्रह्मांड उसमें.........

इस परम मिलन में बस एक ही अवरोध था और यही अवरोध समाधान था हर सवाल का—उसके परिवार के भविष्य के प्रति संभावनाओं का तो विज्ञान की कई अन्य जिज्ञासाओं का भी। उसे पता था कि उसके शरीर में ऐसे कई सूक्ष्म यंत्र लगे हुए हैं जो उस पर होने वाले हर भौतिक—रासायनिक प्रभाव की सूचना और आंकड़े मुख्यालय तक पहुँचाते जाते हैं। वो जानता था कि अंतरिक्ष की कौस्मिक किरणों के मानव शरीर पर प्रभाव का अध्ययन आज तक नहीं हुआ है। इस दिशा में उसका एक छोटा सा कदम वैश्विक ज्ञान भंडार को काफी समृद्ध कर देगा। जितने क्षण भी उसका यह नश्वर शरीर इस ब्रहमांड में शेष रहेगा ये आंकड़े संचित होते रहेंगे। और ब्रह्मांड में विलीन होते ही वह खुद भी इस महाब्रह्मांड का अंश बन जायेगा। ये सब सोचते हुए, इस उधेड़बुन में अनजाने में ही उसके हाथ अपने स्पेस सूट को अंतरिक्ष यान से जोड़ने वाले बेल्ट से खोलते जा रहे थे। यान का स्वचालित द्वार खोल उसने एक छोटा सा कदम बाहर निकाल दिया था अनंत की ओर। अपरिमित ब्रह्मांड का गहन अंधकार उसे अपने में समेटने की ओर बढ़ चला था। आनंद के मस्तिष्क में कभी कहीं सुनी भगवद्गीता की ये पंक्तियाँ उभर रही थीं, जो धीरे—धीरे सारे ब्रह्मांड में गूंजने सी लगीं।

दिवि सूर्यसहस्त्रस्य भवेद्युगपदुत्थिता।
यदि भाः सदृशी सा स्याद्भासस्तस्य महात्मनः।।

(अर्थात् आकाश में हजार सूर्यों के एक साथ उदय होने से जो प्रकाश उत्पन्न हो, वह भी उस विश्व रूप परमात्मा के प्रकाश के सदृश्य कदाचित ही हो।)

अंतरिक्ष का सारा अंधकार उसके सामने सिमटने लगा, जिनके बीच से एक नए प्रकाश का उदय हो रहा था, अद्भुत, असीमित, अप्रतिम, प्रचंड, दिव्य प्रकाश— जो अब उसमें था, जो अब वो स्वयं था.......

(तस्वीर इन्टरनेट के सौजन्य से — http://zidbits.com/2011/03/top-10-biggest-things-in-the-universe/)

उत्तराखण्ड में भूकम्पीय जोखिम

गौतम रावत
वा.हि.भूवि.सं0, देहरादून

भूकम्पीय जोखिमों के अध्ययन से संभावित विभिन्न भूकम्पों के कारण भिन्न–भिन्न क्षेत्रों में जमीनी सतह के कम्पन का आँकलन किया जाता है। जमीनी सतह के इन कम्पनों का प्राकृतिक तथा मानव निर्मित संरचनाओं पर क्या प्रभाव पड़ सकता है इसका भी अध्ययन इसी के अन्तर्गत किया जाता है। इन अध्ययन के फलस्वरूप क्षेत्र विशेष के स्तर पर तैयार संभावित जोखिम के नक्शे तैयार किये जाते हैं। जिनके आधार पर उस क्षेत्र में बुनियादी ढांचों, छोटी, मध्यम तथा ऊँची इमारतों के लिये संरचना मानक लागू किये जाते हैं। इस प्रकार हम समझ सकते हैं कि क्षेत्र विशेष के भूकम्पीय जोखिमों के अध्ययन के लिये सर्वप्रथम उस क्षेत्र की भू–वैज्ञानिक संरचना, चट्टानों का अध्ययन तथा क्षेत्र व आसपास आने वाले भूकम्पों का अध्ययन आवश्यक हो जाता है।

हिमालय में भूकम्प के कारण

संसार की नवीनतम पर्वत श्रृंखला हिमालय में स्थित उत्तराखण्ड राज्य, प्राकृतिक आपदाओं के जोखिम से उतना ही ग्रसित है जितना कि अन्य हिमालयी राज्य। हिमालय की उत्पत्ति से लेकर उसके जीवन काल में अनवरत चलने वाली भूगर्भीय क्रियायें हिमालय में स्थित सभी क्षेत्रों को प्राकृतिक आपदाओं के जोखिम हेतु संवेदनशील बनाती हैं। प्लेट विवर्तनिकी सिद्धांत के अनुसार भारतीय प्लेट दक्षिणी ध्रुव से उत्तर पूर्व की ओर गतिमान थी। अपनी इस यात्रा में लगभग 50 करोड़ वर्ष पूर्व भारतीय प्लेट एशियन प्लेट से टकरायी और इस टक्कर के कारण ही हिमालय की उत्पत्ति हुई। तत्पश्चात् भारतीय प्लेट अपने मुहाने पर स्थित टिथीस सागरीय प्लेट के खिंचाव के कारण एशियन प्लेट के नीचे जाने लगी। जिसे सबडक्शन कहते हैं। जी.पी.एस. अध्ययन बताता है कि दोनों प्लेटों के टकराने के बाद भी भारतीय प्लेट लगभग 50 मिमी प्रति वर्ष उत्तर पूर्व दिशा में खिसक रही है तथा वर्तमान में दोनों प्लेटों के बीच अभिसरण दर 1 सेमी प्रति वर्ष है। दोनों प्लेटों के बीच होने वाले अभिसरण के कारण ही हिमालय की भूगर्भीय चट्टानों पर अनवरत दबाव पड़ रहा है। हिमालय की भूगर्भीय संरचना में विविधता के कारण यह दबाव जब चट्टानों की तन्यता की सीमा से बाहर हो जाता है तो चट्टानें टूट जाती हैं। चट्टानों के टूटने से उनमें वर्षों से संरक्षित हो रही तन्य ऊर्जा चारों ओर बिखरने लगती है तथा भूकम्पीय तरंगों के रूप में एक स्थान से दूसरे स्थान को परिगमित करती है। इस प्रकार हिमालयी क्षेत्रों में आने वाले भूकम्पों का मुख्य कारण, भारतीय और एशियन प्लेटों के मध्य होने वाला अभिसरण ही है।

उत्तराखण्ड में भूकम्प की स्थिति एवं भूकम्पीय जोखिम आँकलन

हिमालय में आने वाले भूकम्पों की स्थिति देखें तो प्रतीत होता है कि अधिकांशतः भूकम्प मुख्य केन्द्रीय भ्रंश के दक्षिण में एक क्षेत्र में सीमित हैं तथा भूकम्पों का यह क्षेत्र हिमालयी चाप की तरह ही सूदूर पूर्व से पश्चिम तक विद्यमान है। भूकम्पों के इस क्षेत्र को हिमालयी भूकम्प पट्टिका के नाम से जाना जाता है। पूर्व से पश्चिम तक इस हिमालयी भूकम्प पट्टिका में यद्यपि भूकम्प की सघनता असमान है और यह असमानता हिमालय की पूर्व से पश्चिम की ओर भूगर्भीय संरचना में जटिलता के कारण तो है ही परन्तु इसका एक अन्य कारण दोनों प्लेटों के बीच अभिसरण के कारण उत्पन्न दबाव का असमान वितरण भी है। यदि हम सन् 1800 से आज तक आये भूकम्पों को उनके आकार के आधार पर अध्ययन करें तो हम देखते हैं कि 2500 किमी लम्बे हिमालयी चाप में बहुत बड़े

भूकम्प सन् 1897 में शिलौंग में (M~8.1), सन् 1905 में कांगड़ा में (M~7.8), सन् 1934 में बिहार–नेपाल में (M~8.3) तथा सन् 1950 में असम में (M~8.7) आये हैं। इन भूकम्पों से जन–धन की काफी क्षति हुई थी। इन भूकम्पों की स्थिति का वितरण देखें तो प्रतीत होता है कि सम्पूर्ण उत्तराखण्ड तथा पूर्वी हिमाचल में विगत में कोई बहुत बड़ा भूकम्प नहीं आया है। इस क्षेत्र को बहुत बड़े भूकम्पों के आने की दृष्टि में केन्द्रीय भूकम्प अभाव क्षेत्र (सेन्ट्रल सीज्मिक गैप) भी कहते हैं। यद्यपि कुछ पुराभूकम्पविद् ऐतिहासिक आधार पर सन् 1803 में गढ़वाल (M~7.7) के भूकम्प का वर्णन करते हैं तथा केन्द्रीय भूकम्प अभाव क्षेत्र को नकारते हैं। परन्तु सटीक आंकड़ों के अभाव में इस भूकम्प की स्थिति व आकार में अनिश्चितता के कारण अधिकांश भूकम्पविद् इस पर प्रश्नचिन्ह लगाते हैं। प्रोफेसर खत्री ने सन् 1987 के शोधपत्र में केन्द्रीय भूकम्प अभाव क्षेत्र की पहचान की तथा इस क्षेत्र में बड़े भूकम्प की संभावना व्यक्त की है। कुछ इसी प्रकार की संभावनायें रोजर बिलहम, विनोद कु0 गौड़ एवं पीटर मोलनार ने सन् 2001 में साईंस मैगजीन के शोधपत्र में प्रस्तुत की हैं। उन्होंने अपनी सभांवनाओं का आधार, दोनों प्लेटों के बीच अभिसरण के कारण उत्पन्न दबाव के समायोजन तथा पूर्व में आये बड़े भूकम्पों के रपचर क्षेत्र के अध्ययन पर किया है। यदि केवल उत्तराखण्ड की बात करें तो इस क्षेत्र में पिछली शताब्दी से आज तक M>6 के लगभग 13 भूकम्प आये हैं। जिनमें दो मुख्य भूकम्प नब्बे के दशक में ही आये हैं। डॉ0 रस्तोगी के सन् 2000 में छपे शोधपत्र में इस श्रेणी के भूकम्पों का आवृत्तिकाल आठ वर्ष निर्धारित किया है। यद्यपि हिमालय के प्रत्येक क्षेत्र में भूकम्प की संभावनायें विद्यमान हैं परन्तु उत्तराखण्ड की विशेष स्थिति के कारण यहाँ भूकम्पीय जोखिम का समग्र आँकलन आवश्यक हो जाता है। यद्यपि इस दिशा में कुछ प्रयास किये गये हैं। इस दिशा में कपिल मोहन, आनन्द जोशी एवं आर सी पटेल के सन् 2008 के शोधपत्र का उल्लेख करना आवश्यक है जिसमें उन्होंने जोखिम आँकलन की विशिष्ट विधियों एवं गणितीय सूत्रों के प्रयोग से उत्तराखण्ड का भूकम्पीय जोखिम नक्शा तैयार किया है। उन्होंने उत्तराखण्ड के अधिकांशतः क्षेत्रों को भूकम्पीय क्षेत्र श्रेणी IV व भूकम्पीय क्षेत्र श्रेणी V में वर्गीकृत किया है। भूकम्पीय क्षेत्र श्रेणी V में हरिद्वार, देहरादून, नैनीताल, अल्मोड़ा, पिथौरागढ़, धारचूला, मुनस्यारी, बागेश्वर, कर्णप्रयाग, रूद्रप्रयाग, ऊखीमठ, उत्तरकाशी व आसपास के इलाके हैं। जबकि गोपेश्वर को भूकम्पीय क्षेत्र श्रेणी IV में रखा गया है। माणा व आसपास के क्षेत्र भूकम्पीय क्षेत्र श्रेणी II व III में बताये गये हैं। भूकम्पीय क्षेत्र श्रेणी V के क्षेत्रों में महत्तम जमीनी त्वरण (PGA) 400 सेमी/सेकण्ड^2 तथा भूकम्पीय क्षेत्र श्रेणी IV में 250 सेमी/सेकण्ड^2 से 400 सेमी/सेकण्ड^2 तक महत्तम जमीनी त्वरण हो सकता है। उत्तराखण्ड में अधिकांश आवासीय संरचनाओं की स्थिति इतने जमीनी त्वरण को सहने की स्थिति में नहीं है। अतः इस क्षेत्र में भूकम्पीय जोखिमों के सटीक आँकलन की आवश्यकता है। यद्यपि उपरोक्त अध्ययन मुख्यतया सैद्धांतिक है परन्तु जिस प्रकार से विभिन्न संस्थानों ने इस क्षेत्र में भूकम्पमापी तथा त्वरण मापी यंत्रों का जाल बिछाया है उससे भविष्य में उत्तराखण्ड में भूकम्पों पर अधिक जानकारी होने के साथ ही, जोखिम आँकलनों की सटीकता भी बढ़ने की संभावनाएं हैं।

सहस्त्रधारा, एक वैज्ञानिक दृष्टिकोण

जूली जायसवाल
वा.हि.भूवि.सं.,देहरादून

सहस्त्रधारा देहरादून में स्थित एक अत्यन्त मनोरम एवं दर्शनीय स्थान है, जो शहर से लगभग 11 कि.मी. दूर है। यहाँ बूंद – बूंद कर जल चूना पत्थर से टपकता रहता है और हजारों धाराओं वाले झरने का निर्माण करता है, यह झरना छिछला और लगभग 9 मीटर गहरा है। झरने का जल बाल्दी नदी से मिलता है और अन्ततः पवित्र गंगा में विलीन हो जाता है।

सहस्त्रधारा का विहंगम दृश्य

झरने और उसके आसपास के क्षेत्र में स्थित गुफायें इस स्थान की सुन्दरता में चार चाँद लगाती हैं। मानसून के दौरान जब रिमझिम फुहारें धरा को भिगोती हैं तो यहाँ की आभा चौगुनी हो जाती है। कहा जाता है कि यह जल औषधीयतुल्य है क्योंकि इस जल में गंधक विद्यमान है जो त्वचा एवं पेट सम्बन्धी रोगों में कारगर है।

गंधक जल कुंड

हजारों की संख्या में पर्यटक प्रतिदिन इस स्थान की सुन्दरता, शुद्धता एवं शांति की अनुभूति करते हैं, जो आधुनिक जीवन शैली में दुर्लभ और प्रकृति द्वारा हमें अनुपम भेंट है। इसके अतिरिक्त यह स्थान वैज्ञानिक एवं आध्यात्मिक दृष्टि से भी महत्वपूर्ण है। झरने के चारों ओर स्थित पहाड़ियाँ पौधों से आच्छादित हैं जहाँ कई प्रकार के जीवों ने अपना बसेरा बनाया है। केकड़े, मेढ़क, चमगादड़, मछलियाँ, साँप जैसे अन्य जीवों ने गुफाओं को भी निर्जन नहीं छोड़ा है। इन गुफाओं की छतों से टपकते जल प्रकृति के शब्द प्रतीत होते हैं और इन निर्जीव पहाड़ियों में भी जान फूँक देते हैं। रज्जुमार्ग से स्थान की सुन्दरता देखते ही बनती है।

गुफा के अंदर जैव विविधताएँ

गुरु द्रोणाचार्य गुफा, प्राचीन शिव मंदिर के लिए प्रसिद्ध है। जहाँ शिवभक्त माथा टेक स्वयं को कृतार्थ करते हैं। यहाँ प्राकृतिक शिवलिंग हैं जहाँ प्रकृति स्वयं जलाभिषेक कर, भगवान शिव से आशीर्वाद लेती रहती है। वैज्ञानिक दृष्टि से यह शिवलिंग स्टैलगमाइट है जो चूने मिले जल के लगातार टपकने से बना है।

वैज्ञानिक दृष्टिकोण

वर्षा का जल, भूमि से होकर गुजरता है और मृदा में उपस्थित कार्बन–डाई–आक्साइड को अवशोषित कर अम्लीय जल में परिवर्तित कर देता है। यह अम्लीय जल दरारों के माध्यम से चूना–पत्थर चट्टानों में प्रवेश करता है तथा चूना–पत्थर चट्टानों को घोलने लगता है जिससे गुफाओं का निर्माण होता है। अन्ततः जल चूने से संतृप्त हो जाता है और गुफा की छतों से टपकता है। जैसे ही जल हवा भरी गुफा की छत से टपकता है, कार्बन–डाइ–आक्साइड का विमोचन हो जाता है एवं अतिरिक्त कैल्शियम गुफा निक्षेप के रुप में निक्षेपित होने लगता है जिससे विभिन्न संरचनाओं का निर्माण होता है जैसे स्टैलैक्टाइट जो कि गुफा की छत से नीचे की ओर बढ़ने वाली संरचनाएं होती हैं। स्टैलगमाइट गुफा की सतह से ऊपर की ओर बढ़ने वाली संरचनाएं होती हैं। ये दोनों संरचनाएं आपस में मिलकर स्तम्भों का निर्माण करती हैं। सोडा नली पतली लंबी नली के समान संरचनायें होती है। धारा शैल चादर के समान चूने पत्थर की संरचनायें होती हैं जो गुफा की दीवारों एवं सतहों पर चूना संतृप्त जल के बहने के कारण बनती हैं। इस प्रकार कटाव, खुदाई एवं निक्षेपण जैसी कई भौतिक एवं रासायनिक क्रियाओं के बाद इन गुफाओं का निर्माण होता है, जो विभिन्न संरचनाओं से अंलकृत होते हैं।

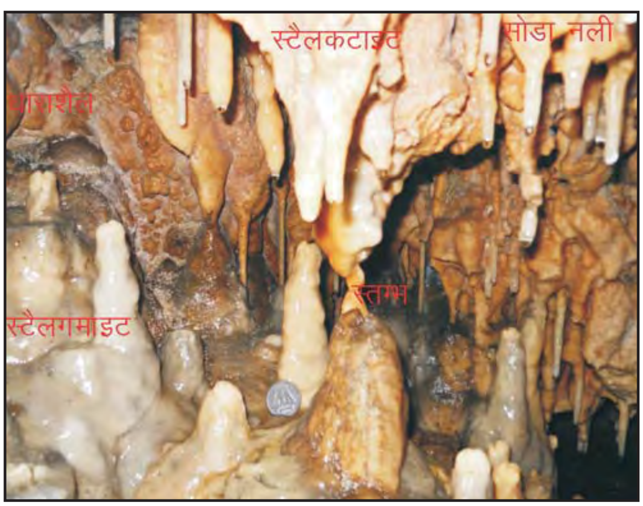

गुफा के अंदर विभिन्न भू–आकृतियाँ

भूवैज्ञानिक खनिज परिवर्तन को अजैविक एवं जीव विज्ञानी इन्हें जैविक परिवर्तन की संज्ञा देते हैं परन्तु वास्तविक रचना तंत्र इन दोनों ही क्रियाओं का संयोग होता है। इन गुफा निक्षेपों के एक्स–रे विवर्तन, एस.ई.एम., इ.डी.एक्स. एवं शैलवर्णन से स्पष्ट होता है कि ये गुफा निक्षेप मूलतः मैग्निशियम कैल्साइट है तथा इनके निर्माण में जैविक एवं अजैविक दोनो ही क्रियाएँ सन्निहित हैं। चित्र में प्रदर्शित गोलाभ एवं अर्द्धपरिपत्र फिलामेंट संरचनायें निश्चय ही सूक्ष्म जैविक संरचनाए हैं। मिकराइट, स्पेरी डोलोमाइट तथा रेडिक्सइल फाइबर कैल्साइट तथा प्राकृतिक सूक्ष्मसंलक्षण की उपस्थिति का प्रमाण भी इनमें मिलता है। एकान्तर क्रम में दीप्त एवं अदीप्त पट्टिकाओं का निर्माण क्रमशः कार्बनिक एवं अकार्बनिक स्रोतों से हुआ है।

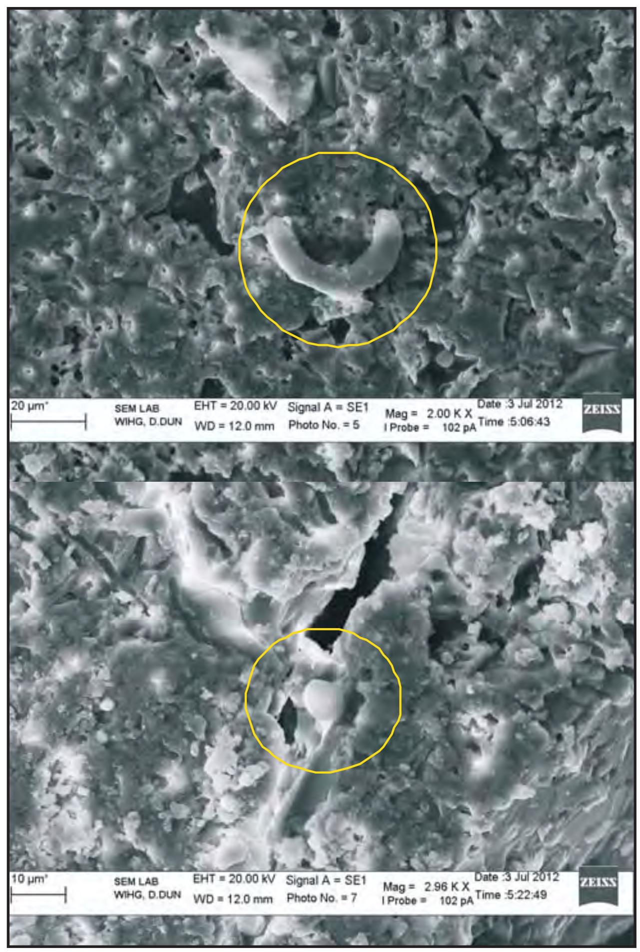

सेम–इ0डी0एक्स0 से प्राप्त सूक्ष्म जैविक संरचनाओं के चित्र

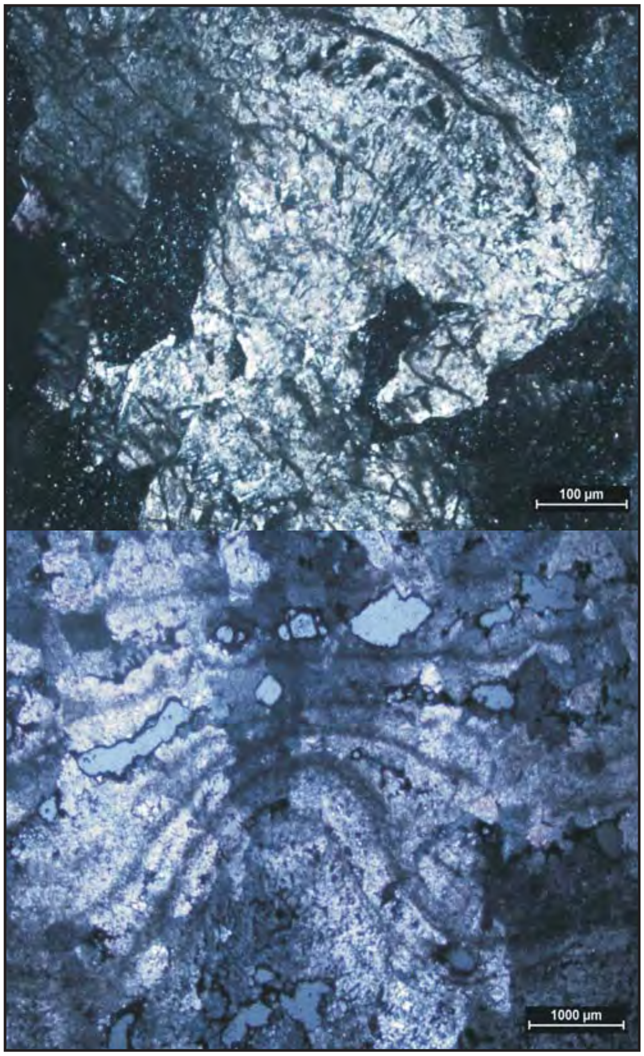

गुफा निक्षेपो का सूक्ष्मदर्शीय चित्र

गुफा निक्षेप एवं उनके महत्व

गुफा निक्षेप उत्कृष्ट अद्वितीय स्थलीय प्राकृतिक संपदा है जिनका अधिकांश देशों में खनन संग्रह एवं बिक्री निषेध है। गुफा निक्षेपों का उद्भव एवं विकास पर्यावरणीय घटकों जैसे वर्षा, तापमान आर्द्रता, वनस्पति प्रकार एवं आच्छादन, मृदा प्रकार इत्यादि कारकों पर निर्भर करता है तथा इन कारकों के साक्ष्य इन गुफा निक्षेपों में संरक्षित होते हैं। इस प्रकार गुफा निक्षेपों के अध्ययन से प्राचीन जलवायु, पर्यावरण, मानसून, ताप इत्यादि तथ्यों को जानने में सहायता मिलती है। गुफा निक्षेप का उपयोग अब पुरामानसून की जानकारी के लिए अरब सागर, ओमान, चीन एवं संसार के अन्य गुफाओं में सफलतापूर्वक किया जा चुका है इससे हमें दक्षिण – पश्चिम एवं पूर्वी एशिया में प्रतिवर्ष आने वाले मानसून चक्र की जानकारी प्राप्त होती है।

आक्सीजन समस्थानिक के अध्ययन द्वारा हम पुरामानसून के बारे में पता लगा सकते हैं। ऐसा देखा गया है कि वर्षा के जल में ^{18}O एवं ^{16}O का अनुपात कम होता है। इस प्रकार गुफा के छत से टपकने वाले जल तथा गुफा निक्षेपों में भी इनका अनुपात ऋणात्मक होता है। यदि $\delta^{18}O$ का अनुपात अधिक ऋणात्मक हो तो यह अतिवृष्टि दर्शाती है।

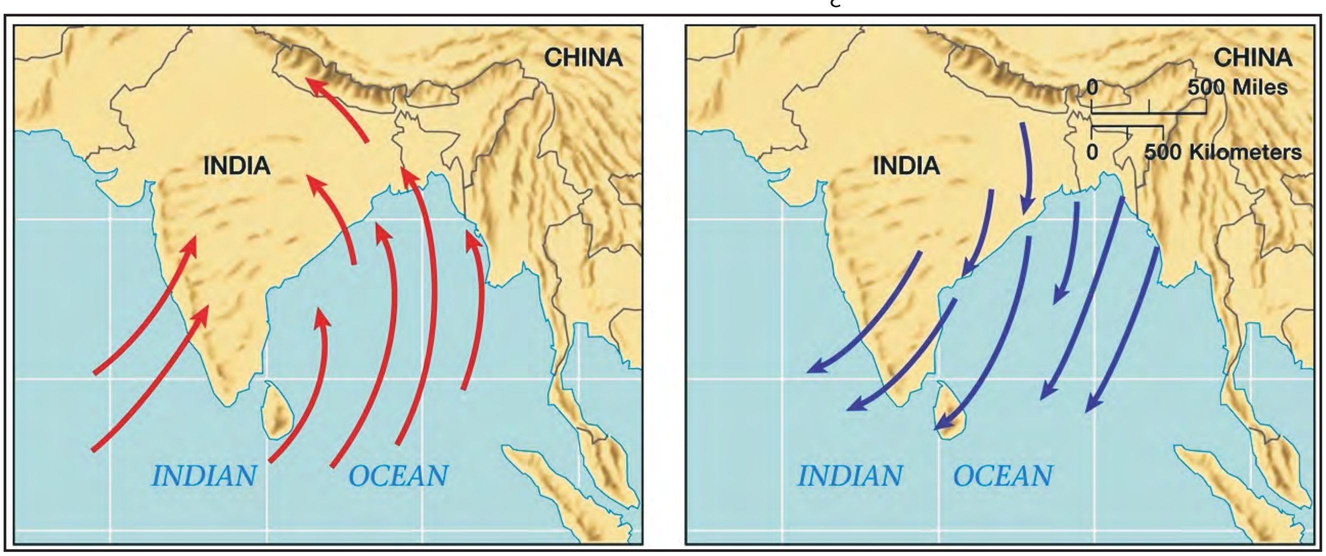

भारतीय उपमहाद्वीप में ग्रीष्म (बाँये) एवं शीत कालीन (दाहिने) मानसून

प्रतिवर्ष जून से सितम्बर तक होने वाली वर्षा को भारतीय ग्रीष्म मानसून कहा जाता है। प्रतिवर्ष जून में मानसूनी वायु दक्षिण पश्चिम दिशा से भारतीय उपमहाद्वीप पहुँचती है चूंकि ये मानसूनी वायु हिन्द महासागर से गुजरती है इसलिए ये आर्द्र होती है एवं भारत व दक्षिण पूर्वी एशिया में भारी वर्षा करती है। हिमालय की ऊंची ऋखंलायें एवं तिब्बत के पठार मानसूनी वायु को नियंत्रित करते हैं। दक्षिण पश्चिम से चलने वाली गर्म वायु हिमालय की चोटियों की वजह से तिब्बत के पठार पर बनने वाली निम्न दबाव क्षेत्र पर नहीं पहुंच जाती एवं उत्तर भारत एवं अन्य स्थानों पर भारी वर्षा होने लगती है। मानसून की वर्षा से करोड़ों लोग प्रभावित होते हैं। भारत एक कृषि प्रधान देश है एवं कृषि मानसून पर निर्भर करती है। कभी – कभी जब मानसून बिगड़ जाता है तो सामाजिक एवं आर्थिक जीवन क्षत–विक्षत हो जाता है।

असमय सूखा, प्रचण्ड बाढ़, बादल फटने जैसी घटनायें मानसून चक्र बिगड़ने के साक्ष्य हैं। यद्यपि भारतीय मानसून मुख्यतः हिन्द महासागर, भारतीय उपमहाद्वीप एवं बंगाल की खाड़ी में होने वाले जलवायु परिवर्तन पर निर्भर करता है परन्तु वैश्विक जलवायु परिवर्तन जैसे वैश्विक तापमान का बढ़ना, समुद्री ताप में परिवर्तन, विश्वतापीकरण जैसी घटनायें भारतीय मानसून को प्रभावित करती हैं। चूंकि सहस्त्रधारा मानसून प्रभावित क्षेत्र है अतः यहां के गुफा निक्षेपों के अध्ययन से जलवायु परिवर्तन एवं मानसून चक्र को समझने में सहायता मिलेगी, जिससे प्राचीन जलवायु एवं वर्तमान परिदृश्य में सामंजस्य स्थापित किया जा सकेगा जो भविष्य में जलवायु एवं मानसून परिवर्तन का अनुमान लगाने में कारगर होंगे। इस प्रकार गुफा निक्षेप, अतीत की कुंजी होंगे, जो कि अमूल्य है।

विज्ञान और चिंतन के अद्भुत सम्मिश्रण : ईवान एफ्रेमोव

अभिषेक मिश्र
शिरीष, यशवन्त नगर, माखम कालेज के निकट, झारखण्ड

विज्ञान कथा एक ऐसी विधा है जिसमें प्रवीणता के लिए जहाँ एक ओर विज्ञान के मूलभूत सिद्धातों से अवगत होना जरूरी है वहीं उसकी लेखनी में वो साहित्यिकता भी होनी चाहिये जो पाठकों के मनोमस्तिष्क में सहजता से जगह बना सके। विज्ञान कथा लेखकों की सफलता इस बात में भी होती है कि उनकी परिकल्पना भविष्य में किस हद तक एक साकार रूप ले पाती है! सुप्रसिद्ध विज्ञान कथा लेखक आइजक असीमोव ने अपनी पुस्तक आरिमोस ऑन साइंस फिक्शन में विज्ञान कथा को परिभाषित करते हुये लिखा है कि ''विज्ञान कथा साहित्य की वह विधा है जो विज्ञान और प्रौद्योगिकी में संभावित परिवर्तनों के प्रति मानवीय प्रतिक्रियाओं को अभिव्यक्ति देती है।'' विज्ञान कथा लेखकों से भी यह अपेक्षा रहती है कि उनकी कहानियों में वैज्ञानिक सिद्धांतों पर आधारित सुगठित और तर्कपूर्ण लय हो। इस सदृढ़ आधार पर खड़ा विज्ञान लेखन एक ठोस वैज्ञानिक परिकल्पना के रूप में किसी–न–किसी अज्ञात सिद्धान्त को सामने लाता है जो भविष्य में किसी नए शोध की प्रेरणा का काम करता है। और निःसंदेह विज्ञान की पृष्ठभूमि से जुड़ा होना लेखक की अभिव्यक्ति को एक सुदृढ़ आधार दे सकता है।

ऐसे विलक्षण विज्ञान लेखकों में एक नाम प्रसिद्ध रसियन भू–वैज्ञानिक और लेखक ईवान एफ्रेमोव का भी है जिनकी लेखनी इन सभी कसौटियों पर पूर्णतः खरी उतरती है। एक वैज्ञानिक और एक विज्ञान कथाकार के रूप में ईवान का योगदान अविस्मरणीय है। ईवान का जन्म 22 अप्रैल 1908 को विरिस्ता, सेंट पीटर्सबर्ग में हुआ। उनके पिता एंटोन एफ्रेमोव एक व्यवसायी थे और उनकी माता वारवरा अलेक्जेंद्रोना एक किसान परिवार से थीं। घर में साहित्य के लिये अनुकूल माहौल था और किताबों का अच्छा संग्रह भी। इनके मध्य बचपन से ही इनकी प्रतिभा की झलक मिलने लगी थी। चार वर्ष की आयु से ही उन्होंने पढ़ना शुरू कर दिया था और छः वर्ष की आयु तक यात्रा संस्मरणों और विज्ञान तथा वैज्ञानिकों से जुड़ी रचनाओं के प्रति वो आकर्षित होने लगे थे। प्रसिद्ध विज्ञान कथाकार जूल्स वर्नी की रचनाओं के प्रति तो वे कुछ ज्यादा ही प्रभावित थे। इसी दौरान धीरे–धीरे उनका सागर के रहस्यों एवं जीवश्म विज्ञान की ओर बढ़ता गया जिसने उनके जीवन पर गहरा प्रभाव छोड़ा। 1914 में उनका परिवार बर्दियान्स्क स्थानांतरित हो गया जहाँ उनकी स्कूली शिक्षा हुई। 1917 में सोवियत क्रांति के दिनों में उनका जीवन भी काफी अव्यवस्थित हो गया। उनके परिवार को आर्थिक नुकसान उठाना पड़ा। उनके माता–पिता का तलाक हो गया, उनकी माँ ने एक सैन्य अधिकारी से दूसरा विवाह कर लिया और ईवान को अपनी बहन के पास छोड़ दिया, जिनकी कुछ अरसे बाद ही दुर्भाग्यवश मृत्यु हो गई। ईवान को अब अपने ही बूते जीवन संघर्ष करना था। 1919 में वो रेड आर्मी में शामिल हो गए। इस अवधि में अपने कार्यों के दौरान 1920 में उन्हें कुछ शारीरिक चोटें भी पहुँची जिनके कारण वो आजीवन वाणी दोष से भी पीड़ित रहे। 1921 में अपनी सेवा से मुक्त हो वो अपनी अधूरी शिक्षा पूर्ण करने के लक्ष्य के साथ पेत्रोगार्ड लौट आये। यह उनकी जिन्दगी का एक और कठिन दौर था जब उन्हें पढ़ाई और जीवन का तालमेल बिठाने के लिए सामान ढोने, ट्रक क्लीनर और ड्राईवर तक के काम करने पड़े। उनकी स्वाभाविक रूचि और नियति ने इस कठिन दौर में भी उन्हें कुछ वैज्ञानिकों से जोड़ा जिनके माध्यम से वो पुस्तकालयों आदि से जुड़े रह पाए और

पढ़ने की अपनी रूचि को बनाये रख सके। 1923 में उन्होंने पेत्रोग्राड स्कूल ऑफ नेविगेशन में दाखिला लिया और यहां से नौचालन की परीक्षा उत्तीर्ण कर उन्होंने कुछ समय विभिन्न जलयानों पर भी काम करते हुए काफी यात्राएं की। 1924 में वो लेनिनगार्ड लौटे और प्रसिद्ध शिक्षाविद् पेत्रोवीच सुश्किन के संपर्क में आये। सुश्किन ने एक पिता और अभिभावक की तरह उनके जीवन को एक नई दिशा दी। इनकी प्रेरणा से ईवान ने लेनिनगार्ड विश्वविद्यालय के जीव विज्ञान विभाग से अपनी शिक्षा पुनः आरम्भ की। इस बीच उनकी रूचि पुराजीवविज्ञान और पुरातत्वविज्ञान में बढ़ी और उन्होंने इनसे जुड़े कई शोध अभियानों में भी भाग लिया। इनके साथ ही 1935 में लेनिनगार्ड माइनिंग संस्थान से उन्होंने स्नातक की डिग्री प्राप्त की और फिर भू–विज्ञान से परास्नातक की उपाधि भी। 1941 में ईवान ने जीव विज्ञान में डॉक्टरेट की उपाधि प्राप्त की ली। 1940–1950 के मध्य वे कई भूविज्ञान और जीवाश्म विज्ञान से संबंधित शोध अभियानों में शामिल रहे और इस क्रम में ट्रांस कॉकेसस, मध्य एशिया, सूदूर पूर्व और साइबेरिया आदि की यात्राएं की। इस अवधि में उनकी कई प्रमुख खोजों में मंगोलिया के गोबी मरूस्थल की 'वैली ऑफ डायनोसोर्स' से जुड़ी खोज विशेष रूप से महत्वपूर्ण थी। इससे और उनके अन्य शोधों और खोजों का सार रूप जीवाश्म विज्ञान की एक नई विधा 'टैफोनॉमी' के रूप में सामने आया। यह विज्ञान उन नियमों से जुड़ा हुआ है जिनके अन्तर्गत जीवों की मृत्यु के बाद उनके जीवाश्म बनने की प्रक्रिया और इस आधार पर पृथ्वी की क्रमिक आयु निर्धारित करने के प्रयास किये जाते हैं। विज्ञान जगत में उनके इस योगदान के लिए उन्हें प्रतिष्ठित स्टालिन पुरस्कार व कई अन्य पुरस्कारों से सम्मानित किया गया। 1958 में वो चीन की यात्रा पर गए और रूसी–चीनी संयुक्त जीवाश्म शोध कार्यक्रम के संस्थापक सदस्यों में एक रहे। उस दौर में साम्यवाद के बढ़ते प्रभाव के बावजूद उन्होंने स्वयं को विज्ञान के प्रचार–प्रसार तक ही केंद्रित रखा।

वैज्ञानिक शोध पत्रों से विज्ञान साहित्य की ओर उनका रूझान भी संयोगवश ही हुआ। 1942 में लंबी बीमारी के दौरान उन्हें काफी समय बिस्तर पर ही गुजारना पड़ा। उनके जैसा उद्यमी और रचनात्मक प्रकृति के व्यक्ति के लिए यह सहज नहीं था। उन्होंने इस अवधि को एक अवसर के रूप में परिवर्तित कर दिया और अपनी विभिन्न साहसिक यात्राओं और अध्ययनों को कहानी के रूप में लिपिबद्ध करते गए। उनकी यह रचनायें पत्रिकाओं में 'विचित्र कथा माला' के रूप में छपने लगीं, जिसने उन्हें आम पाठकों में भी एक नई पहचान और लोकप्रियता दी। उनकी कहानियों का पहला संग्रह 1944 में प्रकाशित हुआ। 1946 में उनका एक अन्य कथा संग्रह 'दि डायमंड ट्यूब' प्रकाशित हुआ, जिसमें उन्होंने साइबेरिया के एक भाग में हीरों की खान मिलने की परिकल्पना की थी। एक विज्ञान लेखक की दूरदर्शिता का यह एक बेहतरीन उदाहरण है कि जिस स्थल पर उन्होंने हीरों की खान होने का अनुमान व्यक्त किया था, वहीं से बाद में हीरों की खोज भी हुई। इसी प्रकार अपनी एक अन्य कहानी 'प्रेतात्माओं की झील' कहानी के माध्यम से उन्होंने जिस प्रान्त से पारे के भंडार की कल्पना व्यक्त की थी, वहीं से पारे का विशाल स्त्रोत भी प्राप्त हुआ। उनकी कहानियों में ही व्यक्त एक अन्य संभावना की तर्ज पर ही बश्कीरिया में एक गुफा से भित्ति चित्र मिले। उनकी कहानियों से और भी कई वैज्ञानिक परिकल्पनाओं की झलक मिलती है जिसने भविष्य में वास्तविक स्वरूप ग्रहण किया, जैसे कि एक छोटी सी गोली जितने सूक्ष्म चिकित्सकीय उपकरण बनेंगे जिन्हें मरीज निगल लेंगे और ये अंदर जा रोगी की स्वतः ही चिकित्सा कर सकेंगे, वस्तु को चारों ओर से दिखाए जा सकने वाले चित्र खींचे जा सकेंगे (होलोग्राफी), या तरल क्रिस्टलों के गुणों का उपयोग करते हुए सजीव चित्र दिखाये जा सकेंगे (वर्तमान में एल.सी.डी. टी.वी.) आदि। प्रसिद्ध रूसी भौतिक वैज्ञानिक यूरी देनिस्युक ने यह स्वीकार किया था कि 'होलोग्राफी' की प्रेरणा उन्हें येफ्रेमोव की कहानी 'अतीत की परछाईयों' से ही मिली थी। इससे स्पष्ट होता है कि ये उन कालजयी विज्ञान

लेखकों में से एक थे जो इस आधार पर अपनी कहानियाँ रचते थे कि आज उपलब्ध विज्ञान और संभावनायें कल क्या स्वरूप अख्तियार कर सकती हैं, और विज्ञान के सुदृढ़ आधार पर खड़ी होने वाली जिनकी कई कल्पनाएं एक सटीक भविष्यवाणी की तरह कालांतर में साकार रूप भी ले लेती हैं।

भारत के लिए एफ्रेमोव का एक अलग ही महत्व है, और वो इसलिए कि उनकी कहानियों और विचारों में भारतीय संस्कृति और दर्शन की गहरी छाप दिखती है। उनकी रचनाओं में एक भाव बारंबार उभर कर आता था कि सुदूर अतीत में तिब्बत में मानवजाति के जीवन के लक्ष्य निर्धारित किये गये थे और आज भी हिमालय की गुफाओं में ऐसे सिद्ध लोग हैं जिन्हें इन लक्ष्यों का ज्ञान है। एफ्रेमोव का दृढ़ विश्वास था कि रूस ही की धरती ऐसी होगी जहाँ भारत के ज्ञान और पश्चिम के विज्ञान का मिलन होगा और जिससे पूरे विश्व को एक नई दिशा मिलेगी। अपने एक लघु उपन्यास 'सर्प हृदय' (दि हार्ट ऑफ सर्पेंट) में उन्होंने यह परिकल्पना की कि संस्कृत ही पहले कम्प्यूटर की भाषा बनती है और फिर सारी मानव–जाति की साझी भाषा का रूप ले लेती है। इस प्रकार एक अर्थ में यह संकेत भी मिलता है कि वो भविष्य के विश्व को भारत और रूस के सुदृढ़ सहसंबंधों के आधार पर आगे बढ़ता हुआ ही देख रहे थे।

उनकी एक अन्य रचना 'उस्तरे की धार' (रेजर्स एज) से उनके दार्शनिक विचारों की भी झलक मिलती है, जिसका सार यह है कि संसार में जो कुछ भी सुन्दर है, ग्राह्य है वह दो चरम ऊँचाईयों– दो चरम गर्तों के मध्य ही स्थित है–उस्तरे की धार की तरह उनके इस विचार में प्रकारांतर से गौतम बुद्ध के 'मध्यम मार्ग' की झलक मिलती है। उनकी भविष्यदृष्टता उनकी इस भावना से भी झलकती है कि वो चाहते थे कि समूची मानव–जाति एक–दूसरे के ही नहीं प्रकृति के साथ भी सह संबंध कायम कर एक साथ आगे बढ़ना सीख ले। वो मानते थे कि इसी से मानव प्रजाति का दीर्घ काल तक अस्तित्व सम्भव है वर्ना स्वयं और प्रकृति के साथ खिलवाड़ कर वह अपने विनाश की राह ही तैयार कर रहा है। उनकी प्रसिद्ध कृति 'दि एन्ड्रोमेड नेबुला' उनके विचारों की सबसे प्रभावी अभिव्यक्ति मानी जाती है जिसमें उन्होंने भविष्य के समाज की परिकल्पना की थी। विज्ञान और सामाजिक स्तर पर अत्यधिक विकसित इस समाज में असमानता और गैरबराबरी का नामोनिशान नहीं है, सभी मनुष्य एक समान हैं– किसी भी बंधन से रहित, ब्रह्माण्ड की सभी गैलेक्सियाँ एक दूसरे से एक इंटरगैलेक्सियल संचार माध्यम से जुड़ी हुई हैं–गैलेक्सियों के एक परिसंघ की तरह। एक ऐसे भविष्य की कल्पना जिसमें स्पेस ट्रेवल की भी रोमांचक परिकल्पना शामिल थी को पाठकों ने काफी सराहा। 5 अक्टूबर 1972 को इस महान वैज्ञानिक और विज्ञान साहित्यकार की मृत्यु हो गई। आशा है कि भविष्यदृष्टा वैज्ञानिक के अन्य साकार स्वप्नों की तरह मानवता के भविष्य के प्रति उनकी यह परिकल्पना भी कभी साकार रूप ले सके। भेदभाव, असमानता, परस्पर घृणा से रहित विज्ञान आधारित एक बेहतर समाज बनाने की दिशा में हमारे सकारात्मक प्रयास ही इस महान वैज्ञानिक चिन्तक को सच्ची श्रद्धांजलि होंगे।

घटते वन, बढ़ती आपदाएं

एन.के. तिवारी
महासर्वेक्षक का कार्यालय, देहरादून

आज विश्व में विकास की अँधी दौड़ में, बड़ी तेजी से वनों का काटा जा रहा है, जिससे पर्यावरण का संतुलन बिगड़ रहा है तथा पृथ्वी पर जीवों के अस्तित्व के लिए खतरा बढ़ता जा रहा है तथा राष्ट्र को आर्थिक हानि हो रही है। एक रिपोर्ट के अनुसार विगत 3 वर्षो (2009–2011) में ही भारत में 5339 स्क्वायर किलो मीटर वन क्षेत्र विकास के नाम पर बलि चढ़ गये तथा राष्ट्र को 2000 करोड़ रूपये की आर्थिक हानि हुई।

वनों के घटने के कारण हर वर्ष, वर्षा के दिनों में, भूस्खलन, बाढ़ आदि से करोड़ों रूपये का राष्ट्र को नुकसान उठाना पड़ता है। उदाहरण के लिए पिछले वर्ष 16 एवं 17 जून 2013 को उत्तराखंड में आई प्राकृतिक आपदा से 5700 यात्रियों व पर्यटकों के जीवन को समाप्त कर दिया तथा बड़ी कठिनाई से सरकारी प्रयासों से 1,17,000 लोगों के जीवन को बचाया जा सका। इसके अतिरिक्त प्रभावित पर्वतीय क्षेत्रों में सड़कों के टूटने, दुकानों, होटलों के नदी में बहने के कारण भी राज्य में भारी जान–माल की क्षति हुई। इसके अतिरिक्त आपदा में 9510 पशुओं की जानें भी गईं, 175 पुल, 1307 सड़कें, 4207 घर तथा 649 पशुघर नष्ट हुए। इसके अतिरिक्त नकदी फसल, जैसे सेब, राजमा तथा अन्य फसलों का उत्पादन भी प्रभावित हुआ। इसके अतिरिक्त प्रत्येक वर्ष समुद्री सुनामी, फाइलिन आदि तूफान उड़ीसा तथा आन्ध्र के तटीय क्षेत्रों में आते हैं। जिससे करोड़ों रूपये की कृषि फसलें नष्ट होती हैं तथा बिजली व्यवस्था, मकान, जन–जीवन प्रभावित होता है यदि तटीय क्षेत्र पर वनों की उपस्थिति हो तो कुछ हद तक तूफान से होने वाली हानि को रोका जा सकता है।

वास्तव में इन आपदाओं के बढ़ने का मुख्य कारण वनों की अंधाधुंध कटाई है। वनों के कटने के कई कारण हैं जैसे बढ़ती जनसंख्या, शहरीकरण, पर्यावरण असंतुलन, ग्लोबल वार्मिग, अति वृष्टि, बाढ़, भू–स्खलन, वनाग्नि, भूकंप, बढ़ता खनन कार्य, औद्योगिकीकरण, समुद्र के किनारे बसे क्षेत्रों में वनों का समय–समय पर आने वाले तूफान में नष्ट हो जाना। अधिक धन कमाने के लिए वन माफियाओं द्वारा दुलर्भ जड़ी–बूटियों तथा लकड़ी की तस्करी हेतु पेड़ों को बड़े पैमाने पर अवैध कटान। पर्यावरण संतुलन के निर्धारित मापदंडों की अवहेलना एवं अनियोजित निर्माण कार्यो से वन क्षेत्र लगातार घटते जा रहे हैं।

वनों का हमारे जीवन में काफी महत्व है। इनसे हमें जीवन रक्षक जड़ी बूटियां, औषधियां आदि मिलती हैं। इनके अलावा इनसे हमें ईधन आदि भी मिलता है। इसके अतिरिक्त हरे भरे पेड़ों से हमें ऑक्सीजन मिलती है जो जीवित रहने के लिए परम आवश्यक है तथा वृक्षों से पर्यावरण संतुलित रहता है क्योंकि जीवों द्वारा उत्सर्जित कार्बन डाई आक्साइड को पेड़ पौधे प्रकाश संश्लेषण की प्रक्रिया में शोषित कर लेते हैं तथा बदले में आक्सीजन उत्सर्जन करते हैं। अतः इनके कटने से पर्यावरण असंतुलित हो जाता है। दूसरी ओर वनों के रहने से पेड़ों की जड़ें मिट्टी को बांधने का कार्य करती हैं जिससे जल–कटाव तथा भू–स्खलन नहीं होता है या कम होता है अतः पेड़ों की उपस्थिति भू–स्खलन को रोकने में अहम भूमिका अदा करती है। 1973 में पर्यावरणविद सुन्दर लाल बहुगुणा तथा चंडी प्रसाद भट्ट द्वारा पर्वतीय क्षेत्रों में चिपको आंदोलन शुरू किया गया जिसमें पर्वतीय क्षेत्र की महिलाएं वन माफियाओं द्वारा वन काटने के समय पेड़ों से लिपटकर पेड़ो को आरी चलाने से रोकने का प्रयास करती थीं। इसी प्रकार कर्नाटक में एक आप्पिकों आंदोलन (1993) में पाण्डुरंग हेगड़े के नेतृत्व में चलाया

गया था तथा इस प्रकार वनों के संरक्षण हेतु सक्रिय प्रयास किया गया।

भारत में वनों के संरक्षण हेतु 1981 में भारतीय वन सर्वेक्षण विभाग की स्थापना की गयी। जिसका मुख्य उद्देश्य वन क्षेत्रों का मापन करना तथा वनों को संरक्षण प्रदान करना है। इसके अतिरिक्त वन सुरक्षा अधिनियम 1980 तथा इसका संशोधन 1981 एवं 1991 में किया गया जिससे वनों को संरक्षित किया जा सके। वन संरक्षा के लिए सरकारी सहयोग के साथ–साथ जन सहयोग भी आवश्यक है। उपरोक्त के अतिरिक्त पर्यावरण संरक्षण हेतु भी भारत सरकार ने एक समिति बना रखी है। जिसमें 18 सदस्य है जिनका मुख्य उद्देश्य वनों को सरंक्षण प्रदान करते हुए पर्यावरण को संरक्षित करना है तथा समय–समय पर सरकार को जलवायु परिवर्तन के विषय में जानकारी उपलब्ध कराना है।

जैसा कि विदित है कि जलवायु परिवर्तन, प्राकृतिक आपदा, बाढ़, तूफान, भू–स्खलन आदि वैश्विक समस्याएं हैं। अतः समय–समय पर संयुक्त राष्ट्र संघ ने भी अपनी विभिन्न एजेंसियों के माध्यम से वनों को संरक्षण प्रदान करते हुए जलवायु पर ध्यान केंद्रित करने का सतत प्रयास किया है और लगातार कर रहे हैं। इस संदर्भ में निम्नलिखित संयुक्त राष्ट्र की एजेंसियां जो कि पर्यावरण/पृथ्वी को बचाने हेतु सक्रिय हैं तथा उन्हें इस दिशा में सभी देशों का सक्रिय सहयोग मिल रहा है –

1. प्रकृति का एवं प्राकृतिक संसाधनों के संरक्षण हेतु अंतर्राष्ट्रीय संघ
2. विश्व वन्य जीवन कोष (1960)
3. युनेस्को का मनुष्य एवं जीवमंडल कार्यक्रम (1970)
4. संयुक्त राष्ट्र का पर्यावरण कार्यक्रम (1984)
5. पृथ्वी रक्षा कार्यक्रम
6. पर्यावरण एवं विकास का विश्वव्यापी कार्यक्रम (1984)

वनों के संरक्षण हेतु उपाय

वनों के संरक्षण हेतु सरकार तथा जन सहयोग के साथ सभी का सहयोग अति आवश्यक है तभी वनों को वाँछित स्तर पर बचाया जा सकता है। संक्षेप में निम्न कदम उठाये जा सकते हैं :–

1. वनों की कटाई को रोकने हेतु राज्य एवं केन्द्र सरकार को पर्यावरण तथा पारिस्थितिकि का ध्यान रखना चाहिए, कोई भी उद्योग, निर्माण कार्य से पहले पर्यावरण संबंधी आवश्यकता देखना आवश्यक है।
2. किसी भी तरह के निर्माण पर (विशेषकर पर्वतीय क्षेत्र में) वन विभाग से अनापत्ति प्रमाण पत्र लेना आवश्यक होना चाहिए।
3. वन तस्करी रोकने हेतु कठोर कानून बनाने चाहिए तथा उसका कठोरता से पालन होना चाहिए।
4. आम जनता में वनों के सरक्षण एवं वृक्ष रोपण के बारे में जन–जागरूकता अभियान चलाया जाना चाहिए ।
5. अधिकतर वनों का विनाश, बाढ़, भूस्खलन से होता है अतः इसको रोकने के लिए पर्वतीय क्षेत्रों में मौसम विभाग के केद्र स्थापित होने चाहिए तथा संचार के माध्यम सुद्दढ़ होने चाहिए ताकि संकट कालीन स्थिति में जन–जीवन को समय से बचाया जा सके।
6. वृक्षारोपण मुख्य रूप से जन आंदोलन का मुख्य हिस्सा बनना चाहिए।
7. जीवाश्म ईधन के स्थान पर नई ऊर्जा तकनीकों का इस्तेमाल करना चाहिए जैसे सौर ऊर्जा, वायु ऊर्जा, भू–तापीय ज्वार भाटे की ऊर्जा, समुद्र तापीय ऊर्जा, जैव ऊर्जा, न्यूक्लियर ऊर्जा, इत्यादि का इस्तेमाल ईधन के स्थान पर करके हम वनों को कटने से रोक सकते हैं।
8. लकड़ी बचाने हेतु मकान/दुकान/बड़े–बड़े अपार्टमेन्ट बनाने में लोहे, स्टील का अत्यधिक इस्तेमाल कर सकते हैं ।
9. प्रत्येक राजकीय/निजी समारोह में वृक्षारोपण को अधिक महत्व देना चाहिए।

10. कार्यालय में पेपर बचाने हेतु ई–मेल, कम्प्यूटर का अधिक प्रयोग करना चाहिए ताकि वनों को अधिक सुरक्षित रखा जा सके।

बढ़ती आपदाओं को रोकने के उपाय

- आपदाओं को रोकने में मौसम विभाग का सक्रिय रोल होता है, सटीक भविष्यवाणी से आपदाओं के नुकसान को कुछ हद तक टाला जा सकता है।
- राज्य सरकार का यह दायित्व है कि नदी/नालों, पर्वतों पर निर्माण सावधानीपूर्वक करायें। यह निर्माण नियमानुसार नदी से 200 मीटर की दूरी पर होना चाहिए।
- पर्वतीय क्षेत्रों में उँचे मकान, भूकंप, बाढ़, भू–स्खलन का शिकार हो सकते हैं अतः कम उँचाई के मकान बनाये जाने चाहिए ।
- उच्च हिमालय में निर्माण व पुनः निर्माण करने से पूर्व भू–गर्भीय, भू–आकृतिक भूकंप, बाढ़, ग्लेशियर के पिघलने की दर आदि कारकों को ध्यान में रखा जाना चाहिए।
- हिमालय के संवेदनशील क्षेत्र में पर्यावरण बचाने हेतु चौड़ी–चौड़ी सड़कों की अपेक्षा छोटे–छोटे मार्ग बनाने चाहिए जो कि भू–स्खलन की स्थिति में भी अधिक सुरक्षित होते हैं तथा जान–माल की सुरक्षा होती है।
- आपदा राहत, बचाव, पुनर्वास समितियों का गठन ग्राम/विकास खंड/जनपद स्तर पर कर स्थानीय निवासियों के सहयोग से करना चाहिए तथा उन्हें पर्वतारोहण व बचाव के तकनीक से दक्ष करना चाहिए ताकि संकटकालीन परिस्थितयों में इस समिति का लाभ पीड़ित जनता को मिल सके।
- पर्वतीय क्षेत्रों में तीर्थयात्रियों की संख्या सीमित होनी चाहिए तथा इनका पंजीकरण होना चाहिए।
- भारी वर्षा के दौरान तीर्थ यात्रियों की धार्मिक यात्रा स्थगित करना चाहिए।

इस प्रकार उपरोक्त वर्णित वन संरक्षण के उपायों तथा आपदा को रोकने के उपायों को अपना कर हम वन क्षेत्रों को बढ़ा सकते हैं तथा आपदा से मुकाबला करके भारी जान–माल की होने वाली क्षति से देश को बचा सकते हैं। सिर्फ आवश्यकता है वन संरक्षण के नियमों का कठोरता से पालन करने की, आपदा से निपटने वाली टीम की दक्षता की तथा समय से उठाये गये प्रभावी राहत के कार्यों की है।

विशाखा दिशा–निर्देश : वर्तमान परिस्थितियों में कार्यस्थलों पर अनिवार्य

अभिषेक मिश्र
शिरीष, यशवन्त नगर, माखम कॉलेज के निकट, झारखंड

लगभग हम सभी ने टीवी पर एक विज्ञापन पर गौर किया होगा जिसमें एक महिला बाहर काम पर जाती है–जिसे बस में उसकी मर्जी के खिलाफ छुआ जाता है, ऑफिस में बॉस की गलत निगाहों का सामना करती है और शाम को घर आते वक्त फिर उन्हीं अनचाहे अनुभवों का सामना करना पड़ता है। वो इन सब हरकतों का कोई प्रतिरोध नहीं करती, खामोशी से वापस लौटती है और गर्म पानी से नहाकर जैसे अपने शरीर पर पड़ने वाली काली नजरों की कालिख और गंदी मानसिकता के निशान धो–पोछती हो.... मगर क्या किसी गीजर के इस विज्ञापन की तरह एक स्त्री के लिए वाकई यह सब इतना सहज है या उसके सामने कोई विकल्प भी है!!! तकरीबन रोज ही हम अपने आस–पास ऐसे लोगों को देखते–सुनते हैं जो घर से बाहर किसी भी कारणवश निकलने वाली महिलाओं के प्रति अपनी संकीर्ण सोच का परिचय देते ही रहते हैं।

भारत में स्त्री–पुरूष के समान अधिकारों का इतिहास जितना पुराना है दोनों के बीच भेद–भाव की जड़ें भी उतनी ही गहरी हैं। इस भेद–भाव की शुरूआत घरों से ही शुरू हो जाती है और यहाँ से शुरू हुआ यह सिलसिला गलियों, सड़कों, सार्वजनिक जगहों से होता हुआ कार्यस्थलों तक भी जा पहुँचता है। सोशल मीडिया जैसे आभासी माध्यम भी इससे अछूते नहीं। इसमें कोई शक नहीं कि तमाम प्रतिभा और क्षमताओं के बावजूद जाने–अनजाने आम पुरूषों की पारंपरिक मनोवृत्ति स्त्रियों को प्रथमतया एक यौन आकर्षण और उपभोग्य वस्तु के रूप में ही देखती हैं। इस मानसिकता से लगातार जूझती स्त्रियाँ फिर भी खामोशी से अपना संघर्ष जारी रखते हुए आगे बढ़ती रहती हैं क्योंकि तिनका–तिनका बटोरी अपनी आजादी के इस घोंसले को वो उजड़ने देना नहीं चाहती, उनकी इस मानसिकता का कई बार गलत इस्तेमाल भी होता देखा गया है और ऐसी घटनाऐं उल्टे उन्हीं पर अंकुश लगाने के लिए ही ज्यादा मजबूती से इस्तेमाल की जाने लगती हैं। ऑक्सफैम इंडिया और सोशल ऐंड रूरल रिसर्च इंस्टीट्यूट के सर्वे "सेक्शुअल हैरेसमेंट ऐट वर्क–प्लेसेज इन इंडिया 2011–2012" के मुताबिक, 17 प्रतिशत कामकाजी महिलाओं को अपने कार्यस्थल पर यौन–शोषण का शिकार होना पड़ता है। कई बार तो दोनों पक्षों को ही इस बात का अहसास नहीं होता कि वो जाने अनजाने शोषक और शोषित की भूमिका निभा रहे हैं।

ऐसे में चर्चित भंवरी देवी प्रकरण ने इन परिस्थितियों को परिभाषित करने में एक उल्लेखनीय भूमिका निभाई। राजस्थान की राजधानी जयपुर के निकट भटेरी गांव की भंवरी देवी जो बाल विवाह विरोधी अभियान में काफी सक्रिय थीं के साथ वर्ष 1992 में जघन्य बलात्कार किया गया। उनके मामले में कानूनी फैसले आने के बाद 'विशाखा' और कई अन्य महिला गुटों ने सुप्रीम कोर्ट में एक जनहित याचिका दायर की। इस याचिका में न्यायालय से आग्रह किया गया था कि कामकाजी महिलाओं के बुनियादी अधिकारों को सुनिश्चित कराने के लिए कानूनी प्रावधान किए जाएं। महिला गुट 'विशाखा' और अन्य संगठनों की ओर से दायर इस याचिका को 'विशाखा' और 'अन्य बनाम राजस्थान सरकार और भारत सरकार' के मामले के तौर पर जाना गया। इस मामले में कामकाजी महिलाओं को यौन अपराध, उत्पीड़न और प्रताड़ना से बचाने के लिए कोर्ट ने विशाखा दिशा–निर्देश जारी किए और अगस्त 1997 में इस

फैसले के माध्यम से कार्यस्थल पर यौन उत्पीड़न की बुनियादी परिभाषाएं दीं। कई सालों तक लोकसभा और राज्य सभा में आवश्यक कार्यवाहियों के बाद अप्रैल 2013 में 'सेक्शुअल हैरेसमेंट ऑफ वुमेन ऐट वर्क–प्लेस ऐक्ट' पास हुआ।

इन दिशा निर्देशों की जानकारी पुरूषों और महिलाओं दोनों के लिए जरूरी है। क्योंकि कई बार महिलाओं को भी पता नहीं होता कि उनके साथ की जा रही औपचारिक सी दिखने वाली हरकतें यौन दुर्व्यवहार की परिभाषा में आ सकती हैं, तो कई बार पुरूषों को भी अहसास नहीं होता कि उनके द्वारा हल्का–फुल्का समझा जा रहा परिहास किसी महिला की भावनाओं को ठेस भी पहुँचा सकता है। ऐसा भी नहीं कि हर बार ऐसे आरोपों में पुरूष ही दोषी हों ऐसे में इन दिशा निर्देशों की जानकारी उन्हें भी सजग और सतर्क रख सकती हैं।

कार्यस्थल पर महिलाओं के सम्मान की सुरक्षा के लिए वर्कप्लेस बिल, 2012 भी लाया गया जिसमें लिंग समानता, जीवन और स्वतंत्रता के अधिकारों को लेकर कड़े कानून बनाए गए। इस मामले पर विचार करते हुए, न्यायालय का यह भी मानना था कि भारत में वर्तमान सिविल और दंड कानूनों (पैनल लॉज) को देखते हुए महिलाओं को उनके कार्यस्थल पर विशिष्ट सुरक्षा उपलब्ध कराना संभव नहीं हो पा रहा है। इसके साथ ही ऐसे किसी दूरगामी और प्रभावी कानून को बनाने में समय भी लग सकता है। ऐसी स्थिति में यह जरूरी और आवश्यक होगा कि कार्यस्थलों पर यौन उत्पीड़न से महिलाओं को सुरक्षित बनाने के लिए नियोक्ता, अन्य जिम्मेदार व्यक्तियों और संस्थाओं को कुछ निश्चित दिशा निर्देशों का पालन करना चाहिए। विशाखा दिशा निर्देशों के अनुसार–

कार्यस्थान पर नियोक्ता और अन्य जिम्मेदार लोगों की जिम्मेदारी

विशाखा दिशा निर्देश के अनुसार नियोक्ता और अन्य जिम्मेदार लोगों की जिम्मेदारी बनती है कि पीड़िता या इस तरह की आशंका रखने वाली किसी महिला को अपमानजनक स्थिति का सामना न करना पड़े। साथ ही यौन उत्पीड़न की शिकायतों के समाधान और हल के लिए सभी जरूरी कदम उठाना भी इस जिम्मेदारी में शामिल है।

यौन उत्पीड़न की परिभाषा

इन उद्देश्यों के अंतर्गत यौन उत्पीड़न के अंतर्गत ऐसे अवांछनीय व्यवहारों को शामिल किया गया है जिनमें–

- किसी भी महिला से किसी भी प्रकार के शारीरिक सम्पर्क के लिए दबाव डाला जाता है।
- किसी भी महिला से यौन संबंध बनाने के लिए अनुरोध या दबाव डाला जाता है।
- किसी भी महिला की शारीरिक बनावट, उसके वस्त्रों आदि को लेकर भद्दी, अशालीन टिप्पणियां की जाती हैं।
- किसी भी महिला को किसी भी तरह से अश्लील और कामुक साहित्य दिखाया जाना या ऐसा कुछ करने का प्रयास किया जाता है।
- किसी भी प्रकार का अन्य शारीरिक, मौखिक या अमौखिक तरीके से यौन प्रकृति का अशालीन व्यवहार किया जाता है।

प्रतिरोधी उपाय

1. उपरोक्त परिभाषानुसार कार्यस्थल पर किस तरह का व्यवहार आपत्तिजनक या यौन प्रताड़ना की श्रेणी में आता है, इस बात को सभी समुचित तरीकों से सभी कर्मिकों की जानकारी में होना चाहिए।
2. सरकारी, गैर सरकारी कार्यालयों में कर्मचारियों के आचरण और व्यवहार संबंधी नियमों के उल्लंघन पर कार्रवाई करने वाले प्रावधानों में यौन उत्पीड़न की गतिविधियों के विरूद्व उचित दंडात्मक प्रावधान भी जोड़े जाने चाहिए।
3. यदि यह मामला निजी नियोक्ताओं से जुड़ा हो तो इन प्रावधानों को औद्योगिक एम्प्लायमेंड (स्थायी

आदेश) कानून, 1946 के अनुरूप दंडनीय बनाया जाना चाहिए।

4. कार्यस्थलों का वातावरण इस योग्य उपलब्ध कराया जाना चाहिए कि कार्य, मानसिक विकास, स्वास्थ्य और स्वच्छता के परिप्रेक्ष्य में कार्यस्थलों का वातावरण महिलाओं के खिलाफ न हो और यह सुनिश्चित किया जाए कि कोई भी महिला कर्मचारी यह न सोचे या सोचने पर विवश हो कि रोजगार को लेकर वह असुविधाजनक स्थितियों में है।

दंडात्मक कार्रवाई

जब किसी कर्मचारी, अधिकारी का व्यवहार भारतीय दंड संहिता के अन्तर्गत एक निश्चित अपराध की श्रेणी में आता हो तो नियोक्ता को उसके खिलाफ समुचित प्राधिकारी के समक्ष समुचित कानून के अंतर्गत शिकायत दर्ज करानी चाहिए, और दंडित किया जाना सुनिश्चित किया जाना चाहिए। ऐसे मामले में सुनिश्चित किया जाना चाहिए कि पीड़ित या गवाहों का शोषण न हो या उन्हें सुविधाहीनता की हालत में रखा जाए। यौन प्रताड़ना से पीड़ित के सामने आरोपित का या अपना अपने पसंद के स्थान पर स्थानान्तरण करा लेने का विकल्प होना चाहिए।

अनुशासनात्मक कार्रवाई

अगर किसी कर्मचारी के खिलाफ कदाचार का मामला सामने आता है तो सेवा नियमों के अनुसार उसके खिलाफ समुचित कार्रवाई हो। इन्हीं नियमों के आधार पर उसके खिलाफ कठोर अनुशासनात्मक कार्रवाई भी की जानी चाहिए।

शिकायत की प्रक्रिया

कोई आचरण कानून के खिलाफ दंडनीय अपराध है या नहीं, यह तय होने के बाद शिकायत करने की एक ऐसी व्यवस्था मौजूद होनी चाहिए ताकि दोषी के खिलाफ कार्रवाई की जा सके। इसके लिए रोजगार के स्थल पर एक शिकायत व्यवस्था होनी चाहिए। शिकायतों का निश्चित समय के अंदर निराकरण भी सुनिश्चित किया जाना चाहिए।

शिकायत समिति

संस्थानों या कार्यस्थल पर एक शिकायत समिति, एक विशेष सलाहकार या अन्य सहायक व्यवस्था होनी चाहिए और शिकायतों के मामलों में पूरी तरह से गोपनीयता सुनिश्चित की जानी चाहिए। शिकायत समिति की प्रमुख एक महिला को बनाया जाना चाहिए और इस समिति के कम से कम आधे सदस्य महिलाएं ही होनी चाहिए। किसी भी प्रकार के अवांछित दबाव या प्रभाव का सामना करने के लिए शिकायत समिति में तीसरे पक्ष के तौर पर कोई एनजीओ या यौन प्रताड़ना से जुड़े मुददों की जानकार संस्था को भी शामिल रखा जाना चाहिए।

जांच समिति को इन शिकायतों से संबंधित सरकारी विभागों को वार्षिक तौर पर एक रिपोर्ट भी सौंपी जानी चाहिए जिसमें यह भी बताया जाए कि शिकायतों पर क्या कार्रवाई की गई।

नियोक्ताओं और प्रभारी लोगों के लिए भी यह अनिवार्य बनाया जाए कि वे संबंधित मामलों में सरकारी विभागों को रिपोर्ट भेजें।

कार्मिकों द्वारा पहल का अवसर

इस तरह के विषयों पर कार्मिकों को भी अपनी ओर से पहल करने का अधिकार दिया जाना चाहिए। विभिन्न बैठकों में या मंचों पर कर्मचारियों को ऐसे मामलों को उठाने की छूट मिलनी चाहिए।

जागरूकता

महिला कर्मचारियों में उनके अधिकारों को लेकर जागरूकता भी पैदा की जानी चाहिए। इस मामले में प्रमुखता के साथ दिशा निर्देश जारी किए जाने के अलावा इस बात की सभी को उपयुक्त तरीके से जानकारी उपलब्ध कराई जानी चाहिए कि किसी आरोपी या अपराधी के खिलाफ किस कानून के अंतर्गत क्या कार्रवाई की गई और उसे क्या सजा दी गई।

तीसरे पक्ष या बाहरी व्यक्ति के द्वारा यौन उत्पीड़न

जब किसी तीसरे पक्ष या बाहरी व्यक्ति के द्वारा यौन प्रताड़ना का मामला सामने आता है तो ऐसे मामलों में नियोक्ता या उसके द्वारा नियुक्त प्रभारी व्यक्ति को पीड़ित पक्ष के समर्थन में समुचित प्रतिरोधी कार्रवाई में मदद की जानी चाहिए।

केन्द्र और राज्य सरकारों से भी आग्रह किया गया है कि जब और जहां कहीं भी दंडात्मक कार्रवाई की जरूरत पड़े तो मामले पर समुचित उपाय करने, कानून बनाने और दिशा निर्देश तय करवाए जाएं। यह व्यवस्था निजी क्षेत्र के नियोक्ताओं द्वारा भी सुनिश्चित कराई जाए और यह भी सुनिश्चित किया जाए कि किसी प्रकार के दिशा निर्देशों से मानवाधिकार कानून, 1993 के प्रावधानों का उल्लंघन न किया जाए।

इन दिशा निर्देशों द्वारा कार्यस्थल पर महिलाओं के लिए वातावरण बेहतर बनाने का प्रयास तो किया गया है, परंतु कई अन्य प्रावधानों की तरह यह भी पूर्णतः त्रुटि रहित नहीं है। उस स्थिति में जब यौन शोषण का आरोप संस्थान के किसी कार्मिक पर न लगकर उस व्यक्ति पर लगा हो जो उस पूरे संस्थान का कर्ता धर्ता हो या न्यायपालिका, कार्यपालिका अथवा विधायिका की ही शीर्ष हस्ती हो तो ऐसे में क्या विशाखा दिशा निर्देशों के तहत गठित कोई भी कमेटी यौन शोषण की पीड़ित महिला को समुचित न्याय दिला पायेगी ? जिन अधिकारों की बात इस दिशा निर्देश में कही गयी है, कमेटी उनका समुचित उपयोग कर पायेगी ? ऐसे कई उदाहरण हैं जहाँ ऐसे आरोप किसी स्वार्थ से प्रेरित भी लगते हैं, तो कई जगह ऐसे दिशा निर्देशों की अपरिहार्यता भी सामने आती है। ऐसे में न्यायपालिका ही वह संस्थान है जो ऐसे प्रकरणों की सही जाँच और न्याय सुनिश्चित कर सकती है। इस बात का ध्यान भी रखा जाना चाहिए कि मात्र एक आरोप ही किसी आरोपित को दोषी नहीं ठहरा सकता। ऐसे में इस कानून में भी इस बात की सुनिश्चितता होनी चाहिए कि कोई निर्दोष इसका शिकार न बने या किसी भी तरह से इसका गलत इस्तेमाल न हो। ऐसा होने पर ऐसे पक्ष के विरूद्ध भी कड़ी कार्रवाई की जानी चाहिए। इस बात का भी ध्यान रखा जाना चाहिए कि किसी भी प्रकार के दबाव या प्रचार या स्वार्थ आदि के प्रलोभन में किसी निर्दोष को सजा न होने पाये। किन्तु महिला अधिकारों को लेकर बने कई अन्य कानूनों की तरह कुछ तत्वों द्वारा इनका भी दुरूपयोग किए जाने के भय से एक जरूरी पहल को टाला भी नहीं जाना चाहिए जो असंख्य अन्य कार्मिकों के लिए अपने कार्यस्थल पर सम्मानजनक परिस्थितियों के निर्माण में सहायक हो सकता है। कार्यस्थलों पर महिला कार्मिकों का आत्मसम्मान सुरक्षित रखने के लिए यह एक उचित पहल है जिसका स्वागत किया जाना चाहिए क्योंकि इस समस्या के बढ़ते खौफनाक पंजों की काली छाया कभी हमारे घरों तक भी पहुँच सकती है...

विभीषण का राज्याभिषेक

अशोक दुबे
60/4, मोहित नगर, देहरादून

लंकापति रावण द्वारा अपमानित किये जाने पर विभीषण, भगवान श्रीराम की शरण में आ गए थे। सागर के इस पार विभीषण के राज्याभिषेक की तैयारी हो रही थी। वानर वृन्दौ विधि–विधान से कार्य संपन्न करवाने हेतु ऋषि–मुनियों को आमंत्रित करने चले गए थे। नल और नील के मार्गदर्शन में सेतुबंधन का कार्य प्रारंभ हो गया था। एक वृक्ष की शीतल छाया में लधु भ्राता लक्ष्मण ने कुश का आसन बिछा दिया था जिस पर रघुवीर विराजमान थे। पास ही चिंतित विभीषण बैठे थे। विभीषण के हदय में जो ऊंची–नीची तरंगें उठ रही थीं उस से मानो समुद्र की लहरें भी लज्जायमान थीं। प्रभु ने विभीषण के मन के भाव उसके मुखारविन्द पर द्दष्टि गोचर कर लिये। मन का संशय मिटाने के लिये प्रभु ने विभीषण को अपने हृदय के उद्‌गार प्रगट करने हेतु प्रेरित किया।

विभीषण बोले हे देव, हे चराचर के स्वामी, हे शरणागत के रक्षक आप अन्तर्यामी हैं, आपसे कुछ छुपा नहीं है। मेरे मन में कुछ संशय उठ रहे हैं कृपा कर के उनका निदान करिये। आपने मुझे शरण में लेते समय लंकेश से संबोधित किया। आज मेरे राज्याभिषेक की तैयारी कर रहे हैं मगर लंका पर राज्य तो रावण का है। फिर एक राज्य में दो–दो राजा कैसे ?

प्रभु के श्यामल चेहरे पर हल्की सी मुस्कान कुछ इस तरह प्रकट हुई मानो कुमुदिनी स्फुटित होने को तैयार हो। शंका निवारण करते हुए रघुवीर बोले यह पूर्ण रूपेण सत्य है कि एक राज्य में दो राजा नहीं होते मगर जब पवन पुत्र ने अशोक वाटिका उजाड़ी, लंकापति के महल को अग्नि से दहन किया, राजमहल में उसके पुत्र के प्राण हरण किये और जब लंका निवासी अनिष्ट की आशंका से भयभीत हो गए उसी समय रावण का राज्य पर अधिकार चला गया था। जो राजा अपने परिवार और राज्य संपत्ति की रक्षा न कर पाए वह राजा होने का अपना अधिकार खो देता है। प्रजा का भयभीत होना राज्य का सिंहासन विहीन होने का लक्षण है। जब अहंकार के वशीभूत होकर कोई मेरा क्रोध मोल लेता है तो फिर उसकी रक्षा तो देवता गण मिलकर भी नहीं कर सकते। चूंकि मैं भविष्य में देख रहा हूं इसलिये मैंने तुम्हें लंकेश कहा है ।

विभीषण ने विनीत स्वरों में कहा हे प्रभु, हे कृपा निधान आप रघुवंश के चक्रवर्ती सम्राट दशरथ के पुत्र और प्रतापी राजा जनक के दामाद हैं, जगत के स्वामी हैं मुझे दीक्षा दीजिये। अब आप मेरा राज्याभिषेक कर रहे हैं तो कृपा करके मेरा मार्गदर्शन करें कि एक राजा को किस तरह अपने अधिकारों और कर्तव्यों का पालन करना चाहिये ।

अपने राजीवनयनों से स्नेह बरसाते हुए जगताधिपति ने कहा, "प्रिय बन्धु तुम भी उत्तम कुल से संबंध रखते हो। मत भूलो कि तुम ऋषि पुलस्त्य के नाती हो। असुरों के बीच रहते हुए भी तुम भगवत भजन में रमे रहे यही तुम्हारा शीर्षस्थ गुण है। तुम्हारा राज्याभिषेक शास्त्र सम्मत विधि द्वारा समुद्र के खारे पानी से करवाया जायेगा। इसमें जो गूढ़ रहस्य छिपा है उसे पहचानो। समुद्र में जिस तरह हजारों नदियां मिलती हैं उसी तरह हजारों विचार धाराओं को आत्मसात करो और खारे पानी में अर्थात विपरीत परिस्थितियों में रहकर गंभीरता बनाए रखो। तुम्हारे राज्याभिषेक के साक्षात्कार के लिये आकाश में देवता वृन्द है और धरा पर नर हैं, वानर हैं, रीछ हैं और जलकर भी पानी से झांकने का प्रयास कर रहे हैं। इसलिये भविष्य में किसी एक वर्ग के साथ पक्षपात न करते हुए सभी को साथ लेकर चलना होगा। अपने से हीन किसी को मत मानना। वानर और रीछ भी

शक्तिशाली असुरों का वध कर सकते हैं यदि ईश्वर की भक्ति और शक्ति उनके साथ हो। समय परिवर्तनशील है और वह राजा और रंक नही देखता। अधर्मी राजाओं को धूल में मिलाने में काल को समय नहीं लगता। रावण ने प्रभु शंकर के चरणों में अपने हाथों से काटकर अपने सर चढ़ाए थे मगर छल–कपट से पराई स्त्री को हरण करने की जो भूल उसने की इसका परिणाम मिलते समय स्वयं महेश भी उसकी रक्षा नहीं करेंगे। इसलिये अहंकार रहित रहो और छल–कपट का त्याग करो ।"

"अपनी दया लुटाने से पहले याद रखो कि वह व्यक्ति इसका उपयुक्त पात्र है भी या नहीं। स्मरण रहे कि कीचड़ से उठाकर पुष्पों में रखने पर उस व्यक्ति का तो भला हो जाता है मगर कीचड़ में हाथ डालने से निकालने वाले के हाथ गन्दे हो जाते हैं। वही हाथ स्वच्छ जल में धोने पर वह जल भी मलीन हो जाता है।"

"पृथ्वी सब प्रजाजनों की मां है इसलिये पृथ्वी पर धारण समस्त वन संपदा और धान्य संपदा पर प्रजा जनों का हक है। राजा इसे अपनी व्यक्तिगत संपत्ति ना माने और अन्न और फल संपदा को मिल बांटकर खाए। राजा का परिवार समस्त प्रजा है सिर्फ उसके निकट संबंधी नहीं इसलिये सुख–सुविधाओं और धन–धान्य का समान रूप से बंटवारा हो।"

"राजा को संत, विद्वानों और बुजुर्गों का आदर करना चाहिये, उनकी सलाह ध्यानपूर्वक सुननी चाहिये और उनके अनुभवों का निचोड़ ग्रहण करना चाहिये। जिस तरह चन्द्रमा सूर्य से तीव्र प्रकाश लेकर शीतल प्रकाश पृथ्वी को देता है उसी तरह राजा को तीव्र विचारों को ग्रहणकर शीतल संदेश परावर्तित करना चाहिये। मंत्री, वैद्य और गुरू यदि भय या लोभ की आशा में स्वामी के हित की बात न कहकर प्रिय वचन बोलते हैं तो क्रमशः राज्य, शरीर और धर्म इन तीनों का नाश होता है। राजा यदि अनीति की बात करें तो सेवक उसे भय रहित होकर रोक सकता है। अंधकार से उलूक को मैत्री होती है, गुणी राजा ताप और प्रताप रूपी सूर्य के उदय की प्रतीक्षा करते हैं। राजा समदर्शी और लोभ रहित होता है जिसके मन में हर्ष, शोक और भय नहीं होता। स्मरण रहे कि अपने ही कहने पर पुण्य घट जाते हैं। एक गुणी राजा की प्रशंसा उसकी प्रजा करती है, वह प्रजाजनों के हृदय पर राज्य करता है। राजा उपदेश का नहीं मार्गदर्शक होता है। जो राजा इन बातों का ध्यान रखता है वह प्रजा सहित आध्यात्मिक, अधिदैविक और अधिभौतिक तापों से मुक्त रहता है ।

विभीषण ने विनीत होकर प्रभु के चरणों को नमन किया। राज्याभिषेक के लिये मुनिवृन्द आना प्रारम्भ हो गए थे ।

उचित–अनुचित

अमित कुमार वर्मा
महासर्वेक्षक का कार्यालय, देहरादून

किसी भी कार्य को करने में दो विचार धाराएं कार्य करती हैं। एक का सम्बन्ध है जर्मनी के तानाशाह हिटलर से, जो यह कहा करता था कि इस पृथ्वी पर सही और गलत की एकमात्र निर्णायक है – सफलता। तात्पर्य स्पष्ट है सफलता प्राप्त होनी चाहिए, साधन कोई भी और कैसे भी हो। दूसरी विचार धारा का संबंध महात्मा गांधी से है, जिनका कहना था कि पवित्र लक्ष्य की प्राप्ति के लिए पवित्र साधनों का प्रयोग किया जाना चाहिए। विश्व इन दोनों महान व्यक्तियों में किसका सम्मान करता है, इस प्रश्न का उत्तर ही यह स्थापित कर देता है कि जो सही या उचित है वह मान्य भी है और शाश्वत भी। यदि हम सुकरात के जीवन का अध्ययन करें तो हमें अनुभव होगा कि यदि किसी दास को भी इस प्रकार जीवन व्यतीत करने को विवश किया जाए, तो वह भी भाग जाएगा। दार्शनिक सुकरात ने जीवन से पलायन करने के लिए मृत्यु का वरण नहीं किया था, बल्कि गलत काम करने की अपेक्षा उसने मृत्यु का आलिंगन करना अधिक उचित समझा था।

क्या सही है, क्या गलत है, इस संबंध में विवाद हो सकता है, विशेषकर आधुनिक वैज्ञानिक युग में कुछ कार्यों का औचित्य–अनौचित्य देश, काल एवं व्यक्ति की मान्यताओं पर निर्भर होता है, परन्तु कुछ बातें एवं मान्यताएं शाश्वत होती हैं। सुकरात की प्रतिबद्धता उन्हीं के प्रति थी। इसी का लक्ष्य करके अब्राहम लिंकन ने कहा है कि हमको विश्वास होना चाहिए कि औचित्य वास्तविक शक्ति का हेतु बनता है। इसी विश्वास के सहारे हमें अन्त तक अपना कर्तव्य पालन करते रहना चाहिए।

स्वामी विवेकानन्द जीवन और जगत में होने वाली विविधताओं में सामंजस्य स्थापित करने के पक्षधर थे। वह कहते थे कि विज्ञान और आध्यात्म के मध्य संगति स्थापित करो। विभिन्न सिद्धान्तों, मतवादों, पंथों, मजहबों, गिरिजाघरों, मठों, मन्दिरों आदि की बातों की चिन्ता मत करो, क्योंकि प्रत्येक मानव में निहित सारतत्व की तुलना में बाह्य आचार संबंधी बातों का महत्व बहुत कम है। मानव में सारतत्व अथवा आध्यात्म का तत्व जितना ही विकसित किया जायेगा मानव उतना ही अधिक शक्तिशाली बनेगा। सच्चा मानव वही है जो आन्तरिक रूप से शक्तिशाली होता है। पहले अपने ऊपर विश्वास करो। मुठ्ठी भर आत्म–विश्वासी, शक्तिशाली व्यक्ति विश्व का नव–निर्माण कर सकते हैं। आपको भी उन्हीं भाग्यशाली एवं शक्तिशाली व्यक्तियों में अपनी गिनती करानी है। विवेकानन्द का कहना था कि पारलौकिक ज्ञान एवं प्रेम तभी सार्थक होते हैं, जब हम यथार्थ से, इस लोक से जुड़े रहें और हताश हुए व्यक्तियों के प्रति दया एवं करूणा की अनुभूति करते रहें।

जीवन के मूल्यों का जीवन के वास्तविक स्वरूप का दर्शन अध्यात्म के क्षेत्र में कम जीवन की वास्तविकताओं में अधिक होता है। आवश्यक यह है कि हम आत्मविश्वासी एवं दृढ़निश्चयी बनें तथा अपने कर्तव्यों का पालन पूरी निष्ठा के साथ करने का अभ्यास करें, आध्यात्मिकता तब सार्थक होती है जब वह यथार्थ का पोषण करती है। निष्कर्षतः हम कह सकते हैं कि समस्त चिन्तन एवं सार्थक अनुभूतियों का सार यह है कि हम अपने को इस योग्य बनाने का प्रयत्न करें हम उन अहितकर एवं पापमयी शक्तियों का सामना कर सकें, जो समाज में अंधकार फैलाकर अंधकार का लाभ उठाना चाहती है। दूसरे शब्दों में हम सत्य के मार्ग पर अडिग रहें और अपने कर्तव्यों का पालन पूरी निष्ठा एवं ईमानदारी से करें तो हम समाज में फैली बुराईयों एवं कुरीतियों से लड़ सकते है ।

कम लोग सुविधामय मार्ग पर चलने के अभ्यस्त होते हैं। हम उचित के अनुसरण के अनुगमन का संकल्प लेकर उसी पर चलते हैं । सुविधाएं उचित के प्रतिकूल पड़ने पर बाधाएं प्रतीत होने लगती हैं। नकल न करने का संकल्प करके परीक्षा देने वाले को नकल की सुविधाएं काटने को दौड़ती हैं। जो व्यक्ति नियम विरूद्व कार्य नहीं करना चाहते हैं, उनको बड़े से बड़ा प्रलोभन भी नियम विरूद्व कार्य करने के लिए प्रेरित नहीं कर सकता है। महात्मा गांधी अहिंसात्मक स्वतंत्रता संघर्ष के प्रति प्रतिबद्व थे। वे प्रायः कहा करते थे – मुझे हिंसा द्वारा प्राप्त स्वराज्य स्वीकार नहीं होगा। उन्होंने कभी भी मार्ग नहीं बदला और अहिंसा के मार्ग पर चलकर ही हमें आजादी दिलायी। कहने का तात्पर्य यह है कि वही कार्य उचित है जिसको करने का आपने मन बना लिया है तथा आपकी आत्मा भी उसको उचित मानती है । इस संबंध में एक कहानी का जिक्र करना आवश्यक है। एक परीक्षा में एक परीक्षार्थी जिसको 104 डिग्री बुखार था, को एक अलग कमरे में अकेले बैठा दिया गया। कक्ष निरीक्षक ने जानना चाहा–क्या तुमको सहायतार्थ कोई पुस्तक चाहिए, उस युवक ने सहज भाव से मना करते हुये कह दिया कि थोडे से अंकों के पीछे मैं अपना ईमान खराब नहीं करूँगा। परन्तु दुर्भाग्यवश यह कहने वाले भी काफी व्यक्ति मिल जाएंगे कि वह बालक मूर्ख था, द्वार पर आई हुई सुविधा को मना करके उसने भगवान के प्रति अपराध किया। मार्क ट्वेन ने कहा है कि हमेशा सही काम करो, इससे कुछ लोगों को यह सोचकर संतोष होगा कि अभी सत्य एवं ईमान बने हुए हैं तथा कुछ लोगों को यह सोचकर आश्चर्य होगा कि अभी भी ऐसे मूर्ख मौजूद हैं जो ईमानदारी के नाम पर अपना नुकसान करके परेशान नहीं होते हैं।

अनुचित का त्याग एवं उचित को ग्रहण करने वाला व्यक्ति लाभ–हानि पर विचार नहीं करता है। वह तो उचित कार्य इसलिए करता है, क्योंकि उसने ऐसा ही करना सीखा है तथा उसे इसी में प्रसन्नता एवं संतुष्टि मिलती है एवं उसकी आत्मा भी इसकी गवाही देती है।

इस कोटि का व्यक्ति शायद ही नुकसान–फायदे की बात करता है। एक पुरानी कहावत है जिस व्यक्ति को स्वर्ग की चिन्ता नहीं होती वह तो स्वर्ग में ही होता है। उचित के प्रति सजग व्यक्ति असत्य को सुनता है और उसका वध कर देता है। वह उस मार्ग पर चलता है जिस पर परमेश्वर चला है वह उसी मार्ग पर परमेश्वर का हाथ पकड़कर चलता है तो उससे अनुचित कार्य हो ही नहीं सकता।

यदि समाज का प्रत्येक व्यक्ति अपने कर्तव्यों का पालन पूरी ईमानदारी एवं सत्यता से करे तो शायद एक स्वच्छ एवं शुद्व समाज का निर्माण हो सकता है। हम दूसरों से अपेक्षा करने की जगह स्वयं को उचित एवं सत्य के मार्ग पर रखें तो दूसरे तो स्वयं उसका अनुसरण करने लगेंगे। एक बहुत पुरानी और प्रचलित कहावत है – आप भला तो जग भला।

चुंबकीय पहाड़ी

संदीप कुमार चबाक
वा.हि.भूवि.सं.,देहरादून

क्या आप सोच भी सकते हैं कि आपकी गाड़ी एक पहाड़ी पर चढ़ सकती है वो भी बिना इंजन स्टार्ट किये ? यह सोचना अविश्वसनीय सा लगता है लेकिन यह सच है। इसका अनुभव लेह से 30 किलोमीटर दूर कारगिल श्रीनगर राष्ट्रीय राजमार्ग पर लेह लद्दाख में किया जा सकता है। "चुंबकीय हिल" समुद्र तल से 11,000 फीट की ऊंचाई पर, लेह से लगभग 30 किमी, नीमू मार्ग होते हुये पत्थर साहब गुरूद्वारा के पास, लेह कारगिल श्रीनगर राष्ट्रीय राजमार्ग पर स्थित है। इसके दक्षिण की ओर बहती सिन्धु नदी तिब्बत से निकल कर पाकिस्तान को जाती है।

भारत में चुंबकीय हिल का इतिहास 19वीं सदी के आस पास वर्णित है। 19वीं सदी में, लेह लद्दाख शहर के दक्षिण में एक कच्चा मार्ग दक्षिण रिज पर बनाया गया, ऑटोमोबाइल युग के दौरान, 20 वीं शताब्दी में इस मार्ग का विस्तार किया गया, लगभग 1931 में यह अनुभव किया गया कि इस दक्षिण रिज मार्ग पर ड्राइविंग करते हुए कुछ कठिनाई महसूस होती है एक अजीब सा खिंचाव प्रतीत होता है। धीरे धीरे इस हाई हिल को "चुंबकीय हिल" या "मेग्नेटिक हिल" के रूप में जाना जाने लगा। यहाँ के निवासियों और आगंतुकों के लिए एक मनोरंजक स्थानीय आकर्षक बन गया। चुंबकीय हिल अब भारत की एक ऐतिहासिक संपति है। चुंबकीय पहाड़ी, कार से जाने वाले घरेलू पर्यटकों के लिए एक लोकप्रिय केंद्र बन गयी है।

स्थानीय प्रशासन ने एक हिल बोर्ड की स्थापना की है जो पर्यटकों को चुंबकीय हिल की पहचान में मदद करता है। बोर्ड स्पष्ट रूप से पहाड़ी तक पहुँचने और उसके पहले अनुभव का आनंद उठाने में सहयोग करता है। लेह कारगिल मार्ग के एक विशिष्ट स्थान पर वाहन को खड़ा करवा कर बंद इंजन के साथ 20 किमी/घंटा की रफ्तार से, वाहन को आगे बढ़ते हुए अनुभव किया जाता है। हाल ही में लेह और लद्दाख की चुंबकीय पहाड़ी को बजाज मोटर साइकिल के टीवी विज्ञापन में भी दिखाया गया है।

आज चुंबकीय हिल का अनुभव करने के लिए, प्रशिक्षित ड्राइवरों को सड़क पर अपनी कार ड्राइव करने के लिए एक शुल्क का भुगतान करना होता है। जैसे ही कार एक विशिष्ट स्थान पर रोकते हैं, वह स्पष्ट तौर ऊपर की ओर या पीछे की ओर खिसकनी शुरू हो जाती है। वे भी गाड़ी का इंजिन बंद करके।

भारत तिब्बत सीमा पुलिस के द्वारा इस पहाड़ी के ऊपर विमानों और हेलीकाप्टरों के उड़ान के दौरान इस आश्चर्य जनक चुंबकीय शक्ति का अनुभव किया गया। भारतीय वायुसेना के पायलटों ने भी इस घटना की जानकारी दी तदुपरांत विमानों एवं हेलीकाप्टरों को इस क्षेत्र के चुंबकीय प्रभाव से प्रभावित न होने के लिये, उड़ानों को 14,000 फुट की ऊंचाई से ऊपर भरने की सलाह दी गयी सीमा पुलिस के द्वारा इस पहाड़ी का चुंबकीय प्रभाव 14,000 फुट की ऊंचाई (समुद्री स्तर से) तक प्रभावित रहता है।

इस आश्चर्य जनक पहाड़ी तक पहुंचने के लिए दिल्ली से उडानें नियमित रूप से चंडीगढ द्वारा लेह जम्मू–श्रीनगर–संचालित की जाती हैं और सड़क मार्ग जून – अक्टूबर माह में यातायात के लिए खोला जाता है, लगभग 440 किलोमीटर के सड़क मार्ग में अधिकांश भाग पहाड़ियों व पर्वतों से व लद्दाख के प्राचीन बौद्ध मंदिरों से भरा है। इस यात्रा में हिमालय पर्वत की सुंदर वादियों व पहाडियों का पूर्ण आनंद उठाया जा सकता है।

नंदा देवी राजजात यात्रा

संजीव डबराल
वा.हि.भूवि.सं., देहरादून

देवभूमि उत्तराखंड– इसे देव भूमि इसलिये कहा जाता है क्योंकि इसके सुन्दर, सुरम्य, शांत, हरे भरे पर्वतों, निर्मल जल धाराओं और मखमली घाटियों से पूर्ण वातावरण में हमेशा देव वास करते थे या यों कहें कि उस वक्त रहने वाले वासियों का व्यवहार, और जीवन देवताओं के समान था। चोरी, चकारी, बेईमानी आदि सामाजिक बुराईयाँ न के बराबर थीं। उनका मूल उद्देश्य आराधना और शांति पूर्वक जीवन यापन करना और दूसरे को करने देना था इसी कारण पहाड़ों पर आज भी जगह जगह चोटियों पर मन्दिर विराजमान हैं। दूसरी ओर सैकड़ों साधु सन्यासी जप और तप में मग्न रहते थे। इसी कारण इसे देवभूमि अर्थात देवताओं की भूमि कहा जाता है।

देवभूमि अपने नैसर्गिक सौन्दर्य, वन सम्पदा, रहस्य और रोमांच के लिये विश्वविख्यात है। पंच बद्री, पंच प्रयाग, पंच केदार, गंगा, यमुना जैसी पवित्र नदियां यहीं पर बहती हैं। वह गंगा जिसे राजा भागीरथ ने भागीरथ प्रयास से इस धरती पर अवतरित करवाया और शायद इसीलिये गंगा को गोमुख से देवप्रयाग तक भागीरथी कहा जाता है। देवप्रयाग में भागीरथी और अलकनंदा का संगम है उसके बाद ही इसे गंगा कहा जाता हैं।

एक बहुत पुरानी सच्ची घटना है। एक बार हरिद्वार में कुंभ हुआ जिसमें अनेकों राजा आये और उन्होंने हर की पैड़ी है के आस पास अपने शिविर लगाये। टिहरी के राजा भी वहां पहुँचे। एक छोटी और निम्न स्तर का रियासत का राजा समझकर टिहरी के राजा को अन्य राजाओं ने अपने आसपास शिविर नहीं लगाने दिया मजबूरन उन्हें गंगा पार अपना शिविर लगाना पड़ा। गंगा इधर हर की पैड़ी पर बह रही थी। शाम को जब टिहरी राजा ने गंगा पार आरती की और कहा "अगर मेरी गंगा होली तो यख बहली" अर्थात अगर तू मेरी गंगा होगी तो जहां मैं हूं इस पार आकर बहेगी और अगली सुबह गंगा अपने मूल स्थान से उस पार बहने लगी। जिसे देखकर सभी राजा आश्चर्य चकित रह गये। शायद इसलिये ही टिहरी के राजा को बोलांदा बद्री अर्थात बोलने वाला भगवान कहा जाता है। आज भी ब्रिटेन के नेशनल म्यूजियम में एक फोटो लगा है जिसमें भारत के सभी राजा हैं और टिहरी के राजा मध्य में हैं और सिर्फ उनके ऊपर ही छत्र लगा है। ऐसे ही अनेकों रहस्य और रोमांच इस देवभूमि में पाये जाते हैं।

ऐसी ही एक आसक्ति, रोमांच और रहस्य का जीता जागता उदाहरण नंदा देवी राज जात यात्रा का है। जिसमें इस बार मैं भी सम्मिलित हुआ। यह विश्व की सबसे लम्बी (280 किमी) धार्मिक, कठिन और उच्च पर्वत श्रंखलाओं से गुजरने वाली यात्रा है। आपदा में केदारनाथ मन्दिर का सुरक्षित बच जाना, धारी देवी के साथ जब जब छेडछाड़ हुई तब तब आपदा का आना तथा नंदा देवी राजजात यात्रा का रहस्य बरबस ही ध्यान अपनी ओर खींचता है और मनुष्य इस रहस्य में डूबता चला जाता है।

माना जाता है कि नंदा देवी राज जात यात्रा का शुभारम्भ लगभग 1500 वर्ष पूर्व हुआ था जिसे कुमांऊ और गढ़वाल के राजाओं द्वारा सम्पन्न कराया गया। कुमांऊ के कत्यूरी राजाओं और गढ़वाल के राजाओं की ईष्ट देवी होने के कारण ही इसे मां राजराजेश्वरी भी कहा जाता है। नंदा देवी पार्वती का ही रूप है। एक बार नंदा देवी बंसत पंचमी को अपने मैके आई और वहाँ इतना रम गई कि उसे अपने ससुराल यानी कैलाश पर्वत पर जाने की याद ही नहीं रही। धीरे–धीरे 12 वर्ष गुजर गये। यह बात जब राजा के

कानों तक पहुंची तो उसे बहुत दुख हुआ एक विवाहिता का इतने समय तक अपने मैके में रहना अच्छा नही माना जाता अतः राजा तथा ग्राम वासी पार्वती को मनाकर उसे आभूषणों, साज श्रंगार, खाद्य सामग्री के साथ विदा करने उसे उसके ससुराल शिव के पास छोड़ने गये।

तब से हर बारह वर्ष के पश्चात नंदा देवी राजजात यात्रा निकलती है। इस यात्रा का शुभारम्भ पार्वती के मायके कसुवा गाँव, चमोली से हुआ । कहा जाता है कि बंसत पंचमी के दिन गाँववासी मनौती मांगते हैं और माँ पार्वती अपने मायके पहुंच जाती है। उसी वर्ष आसपास के क्षेत्र में एक चौसिंगिया खाडू अर्थात चार सींग वाली भेड़ का जन्म होता है। और उस गोशाला में शेर रोज तब तक आता है जब तक कि उसका मालिक उसे देवी को भेंट नहीं कर देता। राजजात की तारीख को कुंवर चौसिंगिया खाडू और रिगांल से बनी छंतोली यानी छत्र को नौटि गाँव के राजगुरू नौटियालों के सुपुर्द कर देते हैं। नौटि गाँव में कोई मन्दिर नहीं है। नवीं शताब्दी में राजा शीशपाल ने यहां एक यंत्र गड़ाया था। बारह साल में एक बार इसे यात्रा के समय निकाला जाता है और पुनः जमीन में दबा दिया जाता है। आभूषण एवं अन्य कई वस्तुओं को दो थैलियों में बांध कर चौसिंगिया खाड़ू की पीठ पर लाद दिया गया। तथा रिंगाल की छंतोली के नीचे मां पार्वती का प्रतीक चिन्ह सोने की मूर्ति रखी जाती है तथा पूरे विधि विधान से पूजा अर्चना के बाद यात्रा आरम्भ हुई। चौसिगिंया खाडू ने आगे चलते हुए यात्रा का नेतृत्व किया। जिसमें हजारों लोग जागर गाते हुये चाँदपुर गढ़ी पहुंचे। चाँदपुर गढ़ी कभी टिहरी के राजा का महल हुआ करता था जो आज भारतीय पुरातत्व विभाग के अधीन है। कर्णप्रयाग से कुछ आगे गैरसैंण के रास्ते करीब 10 किमी चलने पर इसके अवशेष आज भी देखे जा सकते हैं। यहाँ पर छंतोली चांदपुर गढ़ी के पुरोहितों के सुपुर्द कर दी गई। चाँदपुर में टिहरी के राजपरिवार द्वारा पूजा अर्चना की इसके साथ ही चाँदपुर के थोकी ब्राह्मणों की बारह छोलियाँ भी यात्रा में शामिल हो गयीं। कुलसारी के काली मंन्दिर में दबे काली यंत्र को राजजात की अमावस्या को आधी रात को निकाल इसकी पूजा कर अगली राजजात तक के लिये पुनः दबा दिया गया। कुरूड में नंदा देवी की मूर्ति भी यात्रा में शामिल हो गयी। यहां से कुरूड के ब्राहमण आगे की राजजात के लिये छंतोली लेते हैं।

राजजात यात्रा परम्परागत है इसमें किसी भी प्रकार का कोई बदलाव नहीं आया है। हालांकि मोटर मार्ग उपलब्ध है जो बहुत ही सुगम और छोटा है परन्तु यात्रा अपने पुराने मार्ग का ही अनुसरण करती है यह अलग बात है कि कहीं कहीं यात्रा मार्ग पर ही मोटर मार्ग बन गया है। यात्रा मार्ग का उद्देश्य इसमें अधिक से अधिक गॉवों और मन्दिरों को जोड़ना है। यात्रा का जहाँ जहाँ पड़ाव था वहां के वासियों ने बड़ी श्रद्वा और गर्मजोशी से यात्रा का स्वागत किया। उनके ठहरने, खाने की व्यवस्था, प्रशासन के अलावा स्थानीय स्तर पर भी थी। रात भर जागर हुआ जिसमें शिव, पार्वती के अलावा देवी देवताओं के बारे में बताया गया। बीच बीच में लोगों पर देवता आना देखना भी एक अकल्पनीय और सम्मोहनीय अनुभव था। अनेक पड़ाव और कठिन से कठिनतम होती यात्रा बाण गाँव पहुंची। बाण गाँव बहुत ऊँचाई पर स्थित एक बड़ा गाँव है जिसमें समतल भूमि होने के कारण जगह की कोई विशेष असुविधा नहीं हुई। चारों ओर हरे भरे देवदार के जंगल और सुन्दर वादियाँ बरबस ही अपनी ओर आकर्षित करती हैं। यहाँ दिन में भी अत्यधिक ठंड थी। वाणगांव पहुंचने तक यात्रा में विभिन्न देवी देवताओं के करीब 194 प्रतीक चिन्ह सम्मिलित हो गये। यहीं पर अल्मोड़ा की नन्दा देवी, दशोली, लावा आदि भी इसमें शामिल हो गयी।

वाण से आगे की राजजात यात्रा अत्यन्त कठिन हो गयी थी। यात्रा के 12वें दिन पड़ाव वाण से कुछ आगे गढ़वाल के प्रसिद्व लाटू देवता की पूजा की गयी। यह मंदिर सिर्फ 12 वर्ष में एक बार खुलता है और फिर अगली यात्रा तक के लिये इसमें ताला लगा दिया जाता है। अन्य दिनों में बाहर से ही पूजा की जाती है।

यहां से यात्रा की अगुवाई लाटू देवता करता है। लाटू देवता पार्वती का भाई था। यात्रा की कठिनाइयाँ देखते हुए यहां से आगे की यात्रा में स्त्रियों व बच्चों को शामिल नहीं किया जाता। यहां से आगे कोई गांव नहीं है। आगे की यात्रा गैरोली पाताल वैतरणी होते हुये बेदनी कुण्ड पहुंची। जिसकी ऊँचाई लगभग 3355 मीटर है। इसे बेदनी बुग्याल भी कहा जाता है। बुग्याल का अर्थ है घास का मैदान। यह लगभग 5 किमी में फैला एक अत्यन्त मनोहारी ढालदार घास का मैदान है, हरी भरी मखमली घास ऐसे लगती है मानो प्रकृति ने यहां अपनी चादर फैला दी हो। लगभग 250 टैंट यहां प्रशासन ने लगा रखे थे, कुछ व्यक्तिगत थे। दूर से देखने से यह नजारा ऐसे लगता था मानो हरे भरे मैदान में कुकुरमुत्ते उग आये हों।

यात्रा के साथ चल रहे एक 70 वर्षीय कुबढ़े वृद्ध व्यक्ति को देखकर आश्चर्य हो रहा था जो अपनी पीठ पर 15–20 किलो का प्रतीक चिन्ह लेकर चल रहा था जहां पर एक जवान का खाली हाथ जाना भी मुश्किल होता है। यह भक्ति है या दैवीय शक्ति कुछ कहा नही जा सकता। प्रशासन ने अपनी और से खाने–पीने का प्रबन्ध किया था परन्तु इतने व्यक्तियों के लिये ये काफी नहीं था, दो तीन अस्थाई भोजनालय एवं संगठनों द्वारा उपलब्ध भोजन से लोगों को काफी राहत मिली। इस बार यहां एक अजीब वाकया देखने को मिला एक ऐसी अविस्मरणीय घटना जिसके बारे में हम सोच भी नहीं सकते। राजजात यात्रा जब शाम को वेदनी कुण्ड पहुँची तो अत्यधिक भीड़ हो गई थी। समुचित व्यवस्था न पाकर यात्रा के प्रमुख पंडित अत्यन्त क्रोधित हो गये और प्रशासन के एक वरिष्ठ अधिकारी से उनकी नोकझोंक भी हो गई। कुछ समय तकरार चलती रही अंत मे रूष्ठ होकर पंडित ने उसे शाप दे डाला जा तेरा नाश हो जाए इतना कहना था कि अचानक बिजली कौंधी और उस अधिकारी के कान के बगल से होती हुई निकल गई। इसमे घोर आश्चर्य की बात यह थी कि आसमान बिलकुल साफ था और शाम की हल्की हल्की धूप खिली थी। हम सबके लिये यह एक अकल्पनीय घटना थी जिस पर आसानी से विश्वास नहीं किया जा सकता है।

बेदनी बुग्याल में एक कुण्ड है जिसमें एक ओर से जल धारा निरन्तर आती रहती है और कुण्ड में समाती रहती है। ऐसी मान्यता है कि इसका जल भूमिगत होते हुये गंगा में मिल जाता है। रात भर जागर होते रहे लोग लोक गीत गाकर देवी की स्तुति करते रहे। प्रशासन की ओर से लगाये गये 4–5 गैस लालटेन, जिनकी ऊंचाई 10 फीट होगी, के जलने से पूरा बुग्याल जगमगा उठा। सुबह सूरज की किरणें पड़ने से बुग्याल में पड़ी ओस ऐसे जगमगा उठी मानों सैकड़ों हीरे चमक रहे हों। सुबह पूजा अर्चना करने के उपरान्त यात्रा आगे रूप कुण्ड के लिये रवाना होती है। आगे की यात्रा अत्यन्त विकट है अत्यधिक ऊंचाई होने के कारण सिर्फ शारीरिक रूप से स्वस्थ्य व्यक्तियों को ही यहां से आगे जाने की इजाजत मिलती है।

आगे बढ़ने पर पातर नचौनियाँ स्थान पड़ा। पातर नचौनियाँ के बारे में प्रसिद्व है कि एक बार राजा यशोधवल में यात्रा के नियमों का उल्लंघन कर गाजे बाजे और नर्तकियों के साथ आया और रात्रि में नृत्य का आयोजन किया जिससे देवी नाराज हो गई और उसने नर्तकियों को पत्थर बना दिया। आज भी गोल–गोल शिलाएं वहां देखी जा सकती हैं। इसी से इस स्थान का नाम पातर नचौनियां पड़ा। आगे चलने पर चारो ओर बर्फ से ढका एक अत्यन्त रहस्यमय और अलौकिक कुण्ड मिला जिसे रूपकुण्ड कहते हैं। चारों ओर फैले नर कंकाल, खोपड़ियां, बालों के गुच्छे ओर किसी–किसी हड्डी पर चिपका मांस आज भी देखा जा सकता है। इसकी ऊंचाई लगभग 16000 फुट है। कार्बन डाटा से इनकी आयु लगभग 700 वर्ष आंकी गई है। इन कंकाल के बारे में अनेक मत हैं कुछ इन्हें व्यापारी मानते हैं क्योंकि यहां भारत–चीन सिल्क दर्रा हुआ करता था, कुछ इन्हें कश्मीर के सेनापति जोरावर सिंह और उनकी सेना के कंकाल मानते हैं, जबकि कुछ राजा यशोधवल और उसके लश्कर के कंकाल मानते हैं। इसमें सच्चाई जान पड़ती है। क्योंकि यात्रा

में आये पुरोहितों द्वारा राज परिवार के हाथों से यहां तर्पण कराया जाता है जिससे मृतकों की आत्मा को शांति मिल सके और तर्पण परिवार के सदस्यों द्वारा ही दिया जाता है।

रूपकुण्ड से आगे ज्यूंगराली धार पड़ती है। यह इस यात्रा का सबसे विकट और संकरीला रास्ता था। इसकी चौडाई लगभग दो फुट है। एक ही चट्टान पर लगभग 3 किमी रेंगते हुये चलना पड़ता है। खड़ी चढाई और दूसरी ओर गहरी खाई जिसे देख कर कलेजा मुँह को आ गया। नीचे बर्फ की फिसलन और सर्द तेज हवाओं के झोंके इसे और अधिक खतरनाक बना रहे थे। यहाँ से कुछ आगे समुद्र शिला यात्रा का अगला पड़ाव था। समुद्र शिला एक अत्यधिक सुन्दर स्थान है चारों ओर बर्फ से ढकी चोटियाँ और नीचे बर्फ की चादर। ऊँचाई के कारण वायुदाब अत्यधिक था। यहां से आगे यात्रा का अन्तिम पड़ाव हेमकुण्ड आया। हेमकुण्ड कैलाश पर्वत की तलहटी में स्थित है। यहां पर पूरे विधि विधान से पूजा अर्चना की गयी और फिर समस्त पूजा सामग्री, छंतोलिया और चौसिंगिया खाडू को वहीं छोड दिया गया। यहां से चौसिंगिया खाडू अपनी पीठ पर लगी भेंट सामग्री के साथ अकेला ही कैलाश पर्वत की कठिन डगर पर चल पड़ा। ऐसा मानना है कि यह कैलाश पर्वत तक पहुँच जाता है।

हेमकुण्ड में यात्रा की समाप्ति के बाद यात्री सोर घाट की ओर उतरने शुरू हो गये और घाट से कुंवर, नौटियाल और अन्य लोग लौटि के लिये प्रस्थान करने लगे। इस दौरान नौटि में भागवत एवं यज्ञ पाठ चलता रहा। उसके यहाँ पहुँचने पर उल्लास का वातावरण था। सभी लोगों को भोजन कराया गया। और अगले 12 वर्ष में पड़ने वाली यात्रा के इन्तजार में लोग अपने अपने घरों को लौटने लगे।

मेरा सफर

विशाल चौहान
वा.हि.भूवि.सं.,देहरादून

गुरूवार, 18 अक्टूबर, 2012

जनकपुरी

शाम के सात बजे थे और हम खड़े थे रोम के कोलोसियम के सामने, कुछ समय यहाँ बिताने के बाद हम चल दिए चीन की दीवार की ओर। इस दीवार की विशालता के नजारे लेकर हम मिस्त्र के पिरामिडों के पास जा पहुंचे और वहां से अमेरिका के स्टेच्यू ऑफ लिबर्टी होते हुए पहुंच गए पेरिस के एफिल टावर पर। अब आप कहेंगे की इतनी लम्बी यात्रायें इतने कम समय में पूरा करना तो संभव नहीं है जरूर ये कोई सपना होगा। लेकिन ये कोई सपना नही, दरअसल ये नजारा तो था उत्तर भारत की सुप्रसिद्व राम बारात के स्वागत में आगरा शहर में सजाई जाने वाली भव्य जनकपुरी का। जिसके मुख्य आकर्षणों में इस बार शामिल थे दुनिया के आठ अजूबे। इन अजूबों को बड़ी खूबसूरती के साथ सजाया गया था और उनसे जुड़ी पूरी जानकारियां उन्हीं के नजदीक लगे बड़े–बड़े बोर्डों पर लिखी हुई थीं। लोगो को खासकर छोटे–छोटे बच्चों को एक साथ दुनिया के आठ अजूबों की जानकारी देती हुई ये झांकिया वाकई बड़ी खास थीं ।

षोत्तम तो मर्यादा पुरूषोत्तम भगवान श्री रामचन्द्र जी का इतिहास बहुत ही पुराना सतयुग के समय का है, लेकिन भारत का जनमानस आज अत्यन्त प्रेम से अपने दिल में प्रभु श्री राम व माता सीता को बसाये हुए है। घर–घर में लगी उनकी तस्वीर जो कि उनके प्रिय भाई श्री लक्ष्मण जी व परमप्रिय भक्त संकटमोचन श्री हनुमान जी के बिना अकल्पनीय है और जगह जगह होते श्री रामचरितमानस के पाठ भगवान श्री राम जी में लोगों की असीम आस्था के प्रतीक हैं।

इसी क्रम में हमारी सांस्कृतिक धरोहरों को सहेज के रखने वाला एक बहुत बड़ा आयोजन है उत्तर भारत में बहुत बड़े स्तर पर होने वाली श्री राम लीला का। ये आयोजन लगभग समूचे भारत में मनाये जाने वाले गणपति महोत्सव के अंतिम दिन से शुरू होकर एक महीने तक चलता है। इस दौरान भगवान श्री राम के जीवन की प्रायः सभी घटनाओं का बड़ा ही रोचक मंचन किया जाता है। जिसमें उनके जन्म से लेकर विवाह, माता सीता का रावन द्वारा अपहरण, नवरात्रों के बाद दशहरे पर उसका वध और अंत में अयोध्या लौटने पर दीपावली का आयोजन जैसे लगभग सभी प्रसगों का मंचन होता है। श्री राम विवाह के मंचन के समय अनेकों सुन्दर झांकियों से सजी एक बहुत बड़ी बारात निकाली जाती है, जो आगरा शहर के मुख्य मार्गो से होते हुए माता–सीता की नगरी जनकपुरी पहुंचती है। जनकपुरी का आयोजन नवरात्रों से ठीक पहले अक्टूबर या नवम्बर के महीनों में आगरा के किसी एक क्षेत्र में किया जाता है, और इस बार सन् 2012 के अक्टूबर महीने में जनकपुरी सजाई गयी आगरा के जयपुर हाउस क्षेत्र में।

जनकमहल : हम लोग सबसे पहले जनकपुरी के मुख्य प्रवेश द्वार से होते हुए पहुंच गए मिथिलेश नगरी के गेट पर और यहाँ से सीधे पहुँचे जनकमहल। यह वही महल है जो भगवान श्री राम व उनके परिवार के स्वागत के लिए बनाया गया था और इसमें ठीक बीचों–बीच एक ऊँचे स्थान पर प्रभु श्री राम व माता सीता के भव्य सिंहासन सजे हुए थे। पूरा महल सतरंगी लाइटों के प्रकाश से जगमगा रहा था और ये लाइटें हर पल बदल रही थीं और पूरा महल अलग–अलग रंगों की रोशनी में नहाये जा रहा था।

महल के मंच के सामने ही वी.आई.पी. दर्शक दीर्घा थी जिसमें कुर्सियां आदि पड़ी थीं। भगवान श्री राम की

बारात आने तक यहाँ कई कार्यक्रमों का आयोजन होना था लेकिन हम यहाँ पहले ही आ गए थे और समय से पहले हमें वापस भी जाना था, क्योंकि जैसे–2 समय बढ़ता है यहाँ भीड़ का दबाब काफी अधिक हो जाता है। इसलिए हमने राम बारात का स्वागत व अन्य कार्यक्रम न देखकर पूरी जनकपुरी घूमकर समय से वापस लौटने का निश्चय किया। जनकमहल की खूबसूरती वाकई देखते ही बनती थी, इसे बनाने के लिए हर वर्ग, धर्म व सम्प्रदाय के अनेकों कारीगर भारत के अलग–अलग क्षेत्रों से आते हैं और अपनी कला का प्रदर्शन बखूबी करते हैं। कलाकारों की प्रतिभा का सम्मान करते हुए व उनकी कलाओं को संजोते हुए ये जनकमहल प्रतीक था आस्था, एकता, कला व संस्कृति के एक अनुपम संयोजन का।

पानी के गोलगप्पे : जनकमहल से हम आगे चल दिए और जनकपुरी में अनेकों सुंदर –2 लाइटों से सजे मकानों को देखते हुए वहाँ घूमने लगे। चलने वाले रास्तों के दोनों किनारों लगी अलग–अलग सामानों, खिलौनों, खाने–पीने के सामानों, चाट–पकोड़ों आदि की दुकानों को देखकर तो कुछ खाने का मन बड़े जोरों से करने लगा। हमारे यहाँ के मशहूर गोलगप्पो के ठेले को देखकर किसके मुंह मे पानी नहीं आता। हमने भी सबसे पहले उन्हीं पर हाथ मारा और जी भर के गोलगप्पे उड़ाए और उनके स्वादिष्ठ पानी के चटखारे लेते हुए चल दिए आगे।

बपचन की यादें : गोलगप्पों के मजे लेकर आगे बढ़ते हुए सड़क किनारे सजी उन दुकानों को देखकर अपने बचपन की याद आ गयी जब मैं अपने मम्मी–पापा के साथ जनकपुरी जाया करता था और वो झाग से बुलबुले बनाकर उड़ाने वाला खिलौना और वो लाल रंग का सर पर कलगी लगा कुत्ता जिसमे बार–बार हवा भरने पर वो आगे भागता और आवाज भी निकलता था, जरूर लिया करता था। साथ में एक तलवार, धनुष–बाण और गैस वाला गुब्बारा लिए बिना जाने का तो मन ही नहीं करता था। फिर घर में आकर एक महान योद्धा बन कर घूमा करता था और अपने सपनों को उन झाग के बुलबुलों में भर–भर कर उड़ाता था जो धीरे–धीरे कहीं गायब हो जाते थे। कमरे के अन्दर छत से टकराकर जा रूके उस गैस के गुब्बारे की मजबूरी को देखता और फिर उसे खुले आसमान में छोड़कर उसकी आजादी के मजे लेता, सच में एक अलग ही दुनिया होती है बचपन की। मैंने देखा कि आज भी वही बुलबुले वही आवाज और भागने वाला कुत्ता और धनुष–बान लिए अनेकों बेचने वाले वहां घूम रहे थे।

हम आज की आधुनिक डिजिटल दुनिया में पीछे जरूर कुछ छोड़ते आ रहे हैं जो आगे शायद हमें कुछ भावनाओं से हीन रोबोट बना के ना छोड़ दे। जो भी हो समय का काम ही परिवर्तन है और इसे कोई नहीं रोक सकता। तो मैं बता रहा था कि कई सामान बेचने वाले आज भी उसी तरह से सामान बेच रहे हैं जो दिखाते है कि जनकपुरी का आयोजन महज एक धर्म विशेष की आस्था को ही मजबूत नहीं करता बल्कि सभी धर्म, मजहब, सम्प्रदायों व गरीब तब के के लोगों को एक अच्छी आय भी प्रदान करता है। चूँकि जनकपुरी को देखने उत्तर–भारत ही नही सम्पूर्ण भारत से व कई विदेशी पर्यटक भी आया करते हैं, इस प्रकार से ये आयोजन यहाँ के पर्यटन उद्योग के साथ–साथ लघु उद्योगों, कारीगरों, किराये पर वाहन चलाने वालों और अनेक गरीब लोगों जो कि आइसक्रीम, गुब्बारे, गुडिया के बाल, खिलौने, चाट–पकोड़े और झूले आदि लगाकर अपना पेट भरते हैं, उन सभी के लिए एक अच्छी आय का स्त्रोत बन कर आता है ।

चिड़िया और उसके अंडे : अपने बचपन की यादों से बाहर आते हुए मेरी नजर एक नई चीज पर पड़ी। सड़क किनारे सजी एक दुकान पर कुछ घोंसले लटके हुए थे मैने करीब से जाकर देखा तो उनमें दो–दो चिड़िया अपने अण्डों के साथ बैठी हुई थीं। अब आप उन्हें वास्तव की चिड़िया मत समझ लीजियेगा क्योंकि यदि ऐसा होता तो वो जाने कब की उड़ ली होतीं, यूँ जनकपुरी के शोर शराबे में न लटकी होतीं। दरअसल ये प्लास्टिक की चिड़ियाँ उड़–उड कर आ जाया

करती थीं लेकिन आजकल वो भी मकानों से बने कंक्रीट के जंगलों से दूर कहीं बचे–खुचे पेड़ों पर अपना आशियाना लगाये होंगी। खैर मैंने तो अपने लिए प्लास्टिक की चिड़िया लेकर ही काम चला लिया, कम से कम उन्हें देखकर कुछ याद तो आता ही रहेगा।

दुनिया के आठ अजूबे : चिड़िया, उसके अंडे और घोंसला लेकर हम पहुँचे दुनिया के आठ–अजूबों पर लगी झांकियों को देखने। इन अजूबों के बारे में मैंने शुरूआत में ही बताया था ये बड़ी ही खूबसूरती के साथ सभी का मनोरंजन भी कर रहे थे और साथ ही ढेरों जानकारियों से भरे उनके पास लगे बोर्ड सभी के ज्ञान कोष को समृद्व भी कर रहे थे।

पर्यावरण पर बनी झांकियां : दुनिया के अजूबों का नजारा लेकर हम पहुंच गए पर्यावरण के ऊपर लगी एक प्रदर्शनी में। इस प्रदर्शनी में पिघलते ग्लेशियर्स, वनों में लगने वाली आग, कल–कारखानों के प्रदूषण व रेन वाटर हार्वेस्टिग के ऊपर कई रोचक जानकारियां देते हुए पर्चे भी बांटे जा रहे थे। साथ ही रेन वाटर हार्वेस्टिंग के लाभों और ग्लोबल वार्मिग के मुख्य कारणों पर प्रकाश डालते हुए पर्चे भी दिए जा रहे थे। ग्लोबल–वार्मिग, प्रदूषण व हमारी वन सम्पदा के महत्व को आजकल कौन नहीं जानता लेकिन हम उस पर कितना चल पा रहे हैं और उसमें अपना कितना योगदान दे पा रहे हैं ये वाकई विचारणीय प्रश्न हैं।

इंडिया गेट और भोंपू की आवाजः पर्यावरण प्रदर्शनी को देखकर हम पहुंचे इंडिया गेट पर अब आप इतना तो समझ ही गए होंगे कि इसके लिए हम दिल्ली तो जाने से रहे। जी हाँ यहाँ पर इंडिया गेट की भी बड़ी भव्य झांकी सजाई गयी थी इसके अलावा हमने देवलोक, झूलेलाल भवन और प्रेम–मंदिर गेट की झांकियों का भी आनंद लिया ।अब तक काफी अंधेरा हो चुका था ओर रात के नौ बजने वाले थे। भीड़ का दबाब भी लगातार बढ़ता जा रहा था तो हम लोगों ने यहां से वापस लौटना ही बेहतर समझा। हालांकि यहां से जाने का मन तो नहीं कर रहा था लेकिन जाना तो था ही ओर इसी के साथ हम वापस लौट दिए अपने घर की ओर। पीछे से आ रही भोपुओं और पीपनीयों की आवाजें, जो कि आजकल वहां काफी बेचे जाते हैं, हमारे कानों में गूँज रही थी कई बातें और सवाल कि क्या आने वाले समय में हम अपनी इस सांस्कृतिक धरोहर को इसी प्रकार सहेज पाएंगे? और समय के साथ लगातार बढ़ती इस महंगाई और डिजिटल होते युग में उन खिलौनों या झूले वालों से आगे हमारी मुलाकाल हो भी पाएगी या नहीं?

माँ का जाना

मंजु पंत
वा.हि.भूवि.सं., देहरादून

मैं और मेरी लेखनी फिर से आए हैं आपसे मिलने, लेकिन इस बार हमारा मन उदास है। इसलिए शायद हम आपको हंसा न पाएं, गुदगुदा न पाएं। विषय तो कुछ और सोचा था, जो हमारे और आपके मतलब का ही था, पर अब हमें समझ ही नहीं आ रहा है कि हम क्या लिखना चाहते थे। हम दोनों व्यथित हैं। हमारे जीवन का एक अभिन्न हिस्सा आज हमारे साथ नहीं है। सब कुछ जैसे बिखर सा गया है। हम बहुत कोशिश करते हैं इस बिखरन को संवारने की, संभालने की, पर असमर्थ हो जाते हैं। दुनियां में सब कुछ वैसा ही चल रहा है जैसा पहले था। यही प्रकृति का नियम है। प्रकृति थोड़े ही अपनी गतिविधि में परिवर्तन करती है। किसी के सुख–दुख से उसे क्या लेना देना। और यदि प्रकृति ने इस पर ध्यान देना शुरु कर दिया तो दुनियां ही नहीं रहेगी। इसकी गति अवरुद्ध हो गई तो सब कुछ समाप्त नहीं हो जायेगा।

हम दोनों भी अपने क्रिया कलाप पहले की तरह ही कर रहे हैं। उठना–बैठना, खाना–पीना, हंसना–बोलना, ऑफिस जाना। हमने भी कोई चीज छोड़ी थोड़े ही है। पर हां हम दोनों को कई बार लगता है जैसे समय रुक गया है। ये सब करते हुए भी हमें लगता है जैसे सब कुछ खाली–खाली सा, खोखला सा है। हमारा एक अहम हिस्सा, जिसका हमारी जिन्दगी में सबसे बड़ा रोल था वो जाने कहां खो गया। बहुत चाहकर भी हम उसे देख नहीं पाते उसे गले नहीं लगा पाते।

पहले भी बहुत बार जब भी हम 'अश्मिका' के लिए कुछ लिखने बैठते थे तो हम दोनों ही सोचते थे माँ के बारे में कुछ लिखें। तब हम दोनों के मन में हजारों हजार विचार आते। हम दोनों सोचते ये लिखें, वो लिखें, ऐसा लिखें, वैसा लिखें। हम सोचते कितना कुछ है माँ के बारे में लिखने को। हम तो कई पन्ने भर देंगे। पर जब लिखने बैठते तो कुछ लिख ही नहीं पाते। सोचते क्या लिखें और क्या छोड़ें। सभी कुछ तो लिखने ही लायक था, संजोने ही लायक था। फिर हम सोचते कुछ खास–खास बातें माँ के बारे में जो सबसे अच्छी हैं, वही लिखें, पर लगता माँ के बारे में तो सभी कुछ अच्छा है। इसी क्या लिखें और क्या छोड़ें की उधेड़बुन में हम कभी लिख ही नहीं पाएं माँ के बारे में। आज जब माँ नही हैं तो हम अपनी व्यथा को व्यक्त करने की कोशिश कर रहे हैं। पर समझ में कुछ नहीं आ रहा हैं क्योंकि लिखने को तो बहुत कुछ है पर लिखा कुछ भी नहीं जा रहा। हमारे लिए ये गागर में सागर भरने जैसी बात लगती है।

माँ ही तो थी जिसने सबसे पहले लेखनी को मेरे हाथ में पकड़ाया था। ये कहकर कि कभी एक दूसरे का हाथ और साथ मत छोड़ना। लेखनी को भी और मुझे भी वो पहला दिन आज भी याद है जब माँ ने एक तख्ती मेरे कंधे में लटकायी। साथ में एक कमेट का डब्बा (एक तरह से कमेट तख्ती में लिखने वाली स्याही होता है), डब्बे में लेखनी डालकर मेरे हाथ में पकड़ाया। हमारे माथे पर रोली का टीका लगाकर मुंह में गुड़ का बड़ा सा टुकड़ा (उस समय गुड़ गांव की मिठाई कहलाता था) डालकर हमें गांव में अन्य बच्चों के साथ स्कूल भेजा था। हम दोनों भी हाथ में हाथ डालकर अपने नन्हें साथियों और सीनियर्स के साथ नन्हें–नन्हें डग भरते हुए ऊबड़–खाबड़ पहाड़ी रास्तों पर बड़े उत्साह के साथ चल पड़े थे अपने सपनों की ओर उड़ान भरने के लिए। जब हम स्कूल से आते थे तो माँ ही थी जो हमें अपने हाथों से खाना खिलाती थी। माँ ही तो थी जिसने लेखनी को मेरे हाथ में पकड़ाकर मेरे हाथ को अपने हाथ से पकड़कर हमें प्रथम अक्षर का ज्ञान कराया था। उसी प्रथम अक्षर के ज्ञान ने हमारी आगे की राह रौशन कर दी।

तब से आज तक माँ बराबर हर सुख–दुख में साथ रहीं। माँ के रहते आज भी हम हमेशा नन्हे बच्चे ही बने रहे। आज माँ के जाने से हम अचानक ही बड़े हो गए। ऐसा लग रहा है जैसे हमारा तो बचपन ही कहीं खो गया है। सब कुछ माँ ने कितनी बखूबी संभाल रखा था। हमें अब समझ ही नहीं आ रहा कि अब हम क्या करें। माँ के रहते लगता था कि हमें कुछ भी सोचने की जरुरत नहीं है। लगता था सब कुछ जैसे खुद ही होता चला जा रहा है। आज हम सब कर रहे हैं, पर हर पल हर क्षण माँ याद आती हैं। माँ होती तो ये करती, माँ होती तो वो करती ऐसे चलती, ऐसे बैठती। बचपन में देखा था माँ का नाच और सुने थे उनके गाने और भजन। तब लगता था माँ कितना अच्छा नाचती हैं। देह यष्टि ऐसी कि मानो किसी चित्रकार ने बनाई हो। गाने और भजन ऐसे गाती थीं कि सुनने वाला मंत्रमुग्ध हो जाता था। बड़ा जादुई सा लगता था सब। तब हम अपने नन्हें–नन्हें हाथों से माँ को छूते थे। उनके आंचल को पकड़ कर अहसास करते थे उस खूबसूरती का, जो उनके नाचने गाने में होती थी। तब लगता था हमारी माँ दुनियां में सबसे सुन्दर है। तब ही नहीं अभी भी यही लगता था। सबके मुंह से माँ की तारीफ सुनना हर बच्चे के लिए एक अलौकिक अनुभव होता है। हमारा भी मन गर्व से भर उठता था। तब हम सोचते कि माँ ऐसे हाव भाव कहां से लाती हैं। उनकी आवाज इतनी अच्छी कैसे है। हम अभी तक भी कई बार जब माँ पूजा में बैठकर भजन गाती थी तो चुपचाप सुनते थे। कई बार फरमाइश भी करते थे दुबारा उसी भजन को गाने की। अब ये सब बातें बीते जमाने की हो गई हैं। अब कहां माँ हैं और कहां उनके सारे कार्यकलाप। सब कुछ कहीं खो गया है अचानक ही। शायद हम स्वीकार करना नहीं चाहते, इसलिए लगता है सब कुछ अचानक ही हो गया।

लिखने को बहुत कुछ है। हमारे मन में न जाने कितने विचारों की उथल पुथल हो रही है पर लिखा नहीं जा रहा। लेखनी भी लिखने को तैयार नहीं है। हम दोनों दिल से बहुत उदास हैं। हमारे लेखों, कविताओं कहानियों की सबसे अच्छी श्रोता हमारी माँ ही थीं। जब हम उनको कभी अपनी लिखी कविता सुनाते या वो ''अश्मिका'' में हमारा लेख पढ़तीं तो बहुत खुश होती थीं। निश्छल मन से तारीफ करतीं। हम दोनों भी फूले न समाते, यद्यपि हम जानते थे कि हमने क्या और कैसा लिखा है फिर भी माँ से अपनी तारीफ सुनकर हमें लगता हमारी माँ सबसे अच्छी श्रोता हैं दुनिया की।

माँ के बारे में बता सकें जो, ऐसे शब्द कहां से लाएं,
माँ के जाने से छूट गया जो, उस बचपन को कहां से पाएं,
उन झुर्रियों की छुअन, उन अहसासों को कैसे महसूस करें।
हमारे इंतजार में रहती थीं जो आंखें,
उस इंतजार को, उन बाहों, उन गलबहियों को कहां से लाएं,
अपना दुख अपनी व्यथा किसे बताएं।
माँ की थाली का वो नन्हा सा कौर, अब उसका स्वाद कहाँ से पाएं,
मन की आकुलता, उस बैचेनी को कैसे दूर करें।
माँ से होती थी कुछ गुफ्तगू, कुछ अपनी कहनी, कुछ उनकी सुननी,
उस गुफ्तगू उस बतकहियों को कहां से अब श्रवण करें।
आँखें ढूंढ रही हैं माँ को, दिल में है अजब उदासी,
बेचैनी चैन लेने न दे, माँ के आंचल के सुकून को कहां से पाएं।
सब कुछ भूला–भूला सा, खोया–खोया सा लगता है,
समझ न पाएं कुछ भी, क्या हम भूलें, क्या याद करें।
माना कि जाना है सबको एक दिन, माँ भी चुपचाप चली गईं,
पर इस जाने को, कैसे हम स्वीकार करें।

मेघ तो इस बार भी बरसकर धरा का मस्तक चूम रहे हैं। धरा भी अपना आभार व्यक्त कर नई–नई कोपलों का प्रस्फुटन कर रही है। हमारे लिए मेघों का बरसना, धरती की हरीतिमा का अपना बहुत महत्व है। हमारा पसन्दीदा मौसम है ये, पर इस बार हमारी आँखें भी बरस रही हैं, लेकिन शीतलता का आभास नहीं है, व्यथा की असह्य वेदना है। आप भी हमारी व्यथा को शायद महसूस करें। हम वादा करते हैं आपसे, कि कोशिश करेंगे अगले वर्ष माँ को अपने दिल में रखकर, उनके आशीर्वाद के साथ आपको खिलखिलाते, गुदगुदाते कुछ पल दे पाएंगे, जिसमें हर मौसम के इन्द्रधनुषी रंगों की छटा बिखेरेंगें।

सूर सरोवर

विशाल चौहान
वा.हि.भूवि.सं., देहरादून

साल सन् 2012 में अक्टूबर के महीने की शुरूआत बस हुई ही थी। दिन तो थोड़े गर्म ही थे लेकिन सुबह और रात कुछ हलकी सर्दी समेटे हुई थी। मैं सितम्बर महीने के पहले हफ्ते में गुजरात से होकर आगरा वापस आया था और फिलहाल कहीं जाने का कोई कार्यक्रम भी तय नहीं था। चूंकि लगभग एक महीना होने को आया था और कहीं जाकर घूमने और फोटाग्राफी करने का मन कर रहा था तो सोचा क्यूँ ना आगरा में ही कहीं चला जाये। यूं तो आगरा एक ऐतिहासिक शहर है ओर यहाँ संरक्षित स्मारकों की कोई कमी नहीं है लेकिन बहुत अच्छे पार्कों व उद्यानों की कमी कुछ खलती सी है। फिर भी कुछ अच्छे मुगल गार्डन के अतिरिक्त एक बहुत खास प्राकृतिक जगह भी है। इस प्राकृतिक स्थल की खासियत ये है कि यहाँ देश ही नहीं विदेशों से भी बहुत बड़ी संख्या में मेहमान आया करते हैं और वो भी बिना वीजा व पासपोर्ट के हवाई मार्ग द्वारा। लेकिन अब आप इन्हें कोई अवैधानिक पर्यटक मानने की गलती न करें क्योंकि ये तो वे मेहमान हैं जिन्हें कोई सरहद नहीं रोक सकती और न ही देशों की आपसी शत्रुता या बैर क्योंकि ये तो आजाद परिंदे हैं जो न देश देखते हैं न शहर न जात न पात। हाँ देखते हैं तो अपने अनुकूल एक सुन्दर रमणीय स्थान जहाँ वे अपनी उड़ानों के बीच का समय शान्तिपूर्वक बिता सकें व जहाँ उनके भरपेट भोजन की पर्याप्त उपलब्धता हो। ऐसा ही स्थान है आगरा शहर से 20 किलोमीटर दूर रूनकता नामक जगह पर बना सूर सरोवर पक्षी विहार।

सूर सरोवर पक्षी विहार देश–विदेश के पक्षियों के लिए एक सुन्दर आरामगाह है और एक बड़ी संख्या में विदेशी पक्षियों के आने के कारण इसे सन् 1991 में राष्ट्रीय पक्षी विहार घोषित किया गया। यहाँ 7.13 वर्ग किलोमीटर वाली पहली पंचभुजी संरचना झील है, जिसे कीठम झील कहा जाता है। कीठम झील को सूर सरोवर नाम देने का कारण है इस जगह का 15वीं शताब्दी पुराना ऐतिहासिक महत्व जो कि भक्तिकाल के "मैया मोरी मै नहीं माखन खायो" व "ऊधौं मोंहि ब्रज बिसरत नाहीं" जैसे सुन्दर भक्तिपूर्ण पदों से अलंकृत है। जी हाँ यह स्थान जुड़ा है भक्त शिरोमणि महाकवि सूरदास जी से उनकी कार्यस्थली के रूप में और उन्हीं संत के नाम पर इस पक्षी विहार का नाम सूर सरोवर पड़ा।

सूर सरोवर क्षेत्र में कीठम झील में उछल–कूद करती अनगिनत छोटी–बड़ी मछलियों और सर्दियों में आने वाले सौ से भी अधिक प्रजातियों के विदेशी व स्थानीय पक्षियों के अतिरिक्त जो मुख्य आकर्षण है उनमें शामिल हैं: विभिन्न प्रकार के पेड़–पौधे, अलग–2 स्थानों से लाकर छोडे गए अठारह से भी अधिक प्रजातियों के सरीसृप जिनमें अजगरों की संख्या काफी अधिक है। बारह से भी अधिक प्रजातियों के स्तनपायी इस क्षेत्र की गरिमा को और बढ़ाते हैं, जिनमें मुख्य रूप से छोटे–बड़े पेड़ों पर कूदते–फांदते, कुछ शांत तो कुछ तरह–तरह की आवाजें निकालते शरारती बंदर वातावरण को बड़ा ही रोचक बनाते हैं। साथ ही इस क्षेत्र की ऐतिहासिक धरोहर को समेटे हुई सूर कुटी व उसके पास की कल–कल करती यमुना नदी और उसी से लगा एक नेत्रहीनों का विद्यालय भक्ति, प्रेम, लगन, आत्मविश्वास व आत्मनिर्भरता का अनुपम उदाहरण प्रस्तुत करते हैं। इन सभी के अतिरिक्त उत्तर प्रदेश वन विभाग द्वारा संचालित भालू और इधर–उधर घूमते बड़ी–बड़ी आखों वाले हिरन तो बरबस ही अपनी ओर आकर्षित करते हैं। इस प्रकार ये सभी मिलकर इस क्षेत्र के पारिस्थितिकी तंत्र को स्थायित्व प्रदान करते हैं जो कि वाकई अत्यन्त प्रशंसनीय एवं सराहनीय है।

ऐसे शानदार प्राकृतिक व ऐतिहासिक क्षेत्र में जाने का विचार मन में आते ही मन रोमांच से भर उठता है। इन्हीं विचारों के साथ एक रविवार को हम अपने परिवार के साथ मोटरसाइकिलों पर सवार होकर निकल पडे सूर सरोवर की ओर। ये अक्टूबर की 7 तारीख थी और अपने घर से सुबह 7 बजे निकलकर हम 8 बजे तक पक्षी विहार के प्रवेश द्वार तक जा पहुंचे। प्रवेश द्वार पर वन विभाग के कर्मचारी प्रवेश शुल्क की रसीदें लिए हुए बैठे थे व 01 से 07 अक्टूबर तक मनाये जाने वाले वन सप्ताह का बैनर भी लगा था। हम लोग शुल्क अदा करके अपनी गाड़ियाँ भी अन्दर ले जा सके और ये अन्दर की दूरी के हिसाब से काफी आरामदायक रहा। अन्दर प्रवेश करते ही सामने एक लम्बी सड़क थी जिसके दोनों ओर लगे पेड़–पौधे ऐसे लग रहे थे जैसे हमारे ही इंतजार में स्वागत को खड़े हों। वन विभाग का पक्षी ज्ञान–विज्ञान केंद्र व मछली इस समय बंद थे। दोनो ओर लगे पेड़ों से घिरे रास्ते पर आगे बढ़ते हुए वन विभाग के बोर्ड हमारा ध्यान बार–बार अपनी ओर खींच रहे थे, जिन पर लिखा था "जानवर सड़क पर घूमते हैं कृपया धीरे चलें"। हालांकि हमें इधर–उधर भागते–कूदते बंदरों के अतिरिक्त कोई जानवर सड़क पर नहीं मिला लेकिन आस–पास के पेड़–पौधों से उड़–उड़ कर आती ढेर सारी तितलियों से मुलाकात जरूर हुई। ये तितलियाँ हमारे नजदीक से इतनी बेपरवाह होकर गुजर रही थीं जैसे कह रही हों देखो हमारा घर कितना सुन्दर है और हम भी किन्हीं नन्हीं परियों से कम नही हैं। यहाँ कुछ फोटो खींच कर हम झील के समीप पहुंचे।

कीठम झील : झील की नैसर्गिकता व शांति मन को बड़ा आनंद दे रही थी लेकिन जिन पक्षियों को देखने हम यहाँ आये थे वे तो यहाँ थे ही नहीं। यह देखकर कुछ निराशा हुई तो वहाँ मौजूद वन विभाग के एक कर्मचारी ने हमें बताया कि ये अक्टूबर की शुरूआत ही है, अभी पक्षियों के आने में थोड़ा समय है और जैसे–जैसे मौसम में सर्दी बढ़ना शुरू होगी यहाँ पक्षियों का जमवाड़ा शुरू हो जायेगा। उस कर्मचारी की बातों से कुछ तसल्ली मिली कि चलो जल्दी ही दुबारा यहाँ आकर उन खास मेहमानों को देखा जा सकता है। झील में हमें ढेरों पक्षी देखने को तो नहीं मिले लेकिन पानी में मछलियों की उछल–कूद ने बड़ा मनोरंजन किया, साथ ही कुछ जल पक्षियों द्वारा मछलियों को बड़ी तेजी से गटकते हुए देखने को भी मिला।

सारा वातावरण तरह–तरह के कीट–पतंगों, कुछ पक्षियों व बंदरों की आवाजों से गुंजायमान होते हुए भी बहुत शांति व रमणीयता समेटे हुए था। हम लोग जब पक्षियों को देखने वाले वाच टावर के लिए और आगे बड़े तो रास्ता बंद पाया, शायद इसका कारण कुछ समय पहले गुजर गया बरसात का मौसम था। बरसात के दिनों में यहाँ मौजूद सरीसृपों की सक्रियता काफी अधिक बढ़ जाती है जिसके चलते ये मार्ग बंद कर दिए जाते होंगे और शायद सर्दियों में ये मार्ग धीरे–धीरे खोल दिए जाएँ। अब तक सुबह के 9 बज चुके थे और हमारे पेट के पक्षी भी आवाज लगाने लगे थे। हम लोगों ने एक साफ सी जगह पर एक चादर बिछाई और लेने लगे आनंद अपने पास रखे नाश्ते का।

भालू संरक्षण केंद्र : अपने पेट का पिटारा थोड़ा भरकर हम फिर वापस लौटे तो वन विभाग के भालू संरक्षण के बड़े से बोर्ड के सामने जाकर रूके जिस पर एक ओर एक बड़े भालू की पीठ पर चिपके शावकों का चित्र था। मुझे ये चित्र बड़ा पसंद आया क्योंकि ये सन्देश दे रहा था एक वयस्क जंतु द्वारा अपने शावकों और उन सभी का मानवों द्वारा संरक्षण का। सौभाग्यवश वहां हमारी मुलाकाल वन विभाग के एक कर्मचारी से हुई जोकि हमारे परिचित निकले। उन्होंने बताया भालुओं का देखने के लिए वाच टावर पर जाना होता है, लेकिन उनसे परिचय के कारण वे हमें अपने साथ अन्दर ले गए। लेकिन साथ ही उन्होंने हमें दो खास हिदायतें भी दी जिनमें पहली ये कि अन्दर लगे तारों को, जो कि भालुओं को रोकने के लिए एक दीवार का काम कर रहे थे, उन्हें ना छुएँ क्योंकि उनमें कम तीव्रता का करंट है और दूसरी मेरे हाथ में लगे कैमरे को ना चलाने की विशेष सलाह ।

अन्दर प्रवेश करते ही हमारी मुलाकात एक हिरन से हुई जो कि खुले में ही अपना चारा खा रहा था, हमें देखते ही उसने अपनी बडी–बडी आँखों से कुछ भाँपने की कोशिश की और निर्भीक होकर अपना चारा खाने में मग्न हो गया। हम आगे बढ़ लिए, यहाँ भालुओं के बारे में अनेकों जानकारियां देते हुए कई बोर्ड लगे हुए थे। वहां लगे हुए तारों (जिन्हें छूना मना किया गया था) के अन्दर पानी के कई छोटे–छोटे तालाब और बांसों से मिलाकर बनाये गए सीढ़ीनुमा ढांचे खड़े थे । विभाग के उस कर्मचारी ने हमें बताया कि भालू खाना खाने के बाद यहाँ कूद–फांद कर मस्ती करते हैं। उन्होंने ये भी बताया कि भालुओं को खाने में शहद, अंडे व दलिया दिया जाता है और वे इधर–उधर घूम–घूम कर दीमक व अन्य कीड़ें आदि खाते रहते हैं। उनसे हमें यह भी पता चला कि इस संरक्षण केंद्र में लगभग 265 भालू संरक्षित हैं, जिनमें से ज्यादातर नाच दिखने वाले मदारियों से 50,000 / – रूपये व उनके बच्चों की मुफ्त शिक्षा का प्रबंध करके लिये गये हैं। इस प्रकार से ये संरक्षण केंद्र काफी महत्वपूर्ण हो जाता है, जो इतनी तत्परता के साथ भालुओं के संरक्षण में लगा हुआ हैं। जिस समय हम वहाँ पहुंचे भालू खाना खाने में व्यस्त थे इसलिये हमें उनके करतब देखने को तो नहीं मिले लेकिन उनमें से एक दो ने हमारी ओर देख कर शायद इतना जरूर कहा कि भाई जरा सही टाइम पर तो आया करो, खाते समय नो डिस्टर्बेंस प्लीज। जो भी हो ये केंद्र देखकर बड़ी खुशी हुई कि आगरा के इस महत्वपूर्ण स्थान पर मनुष्यों द्वारा एक प्राणी प्रजाति को इतनी लगन के साथ संरक्षित किया जा रहा है। वहां से निकलते हुए हमने उन कर्मचारी महोदय का आभार व्यक्त किया और चल दिए सूर कुटी की ओर।

सूर कुटी व नेत्रहीनों का विद्यालय : भालू संरक्षण केद्र से मुख्य मार्ग की ओर वापस लौटते हुए हम सूर कुटी की ओर मुड़ गए और पहुँच गए भक्ति रस में रंगे उस पावन स्थल पर जो उन महान भक्त, कवि संत सूरदास जी की याद दिलाता है। यहाँ एक नेत्रहीनों का विद्यालय है जो स्वाबलंबन व आत्मनिर्भरता का एक जीवंत उदाहरण है। यहाँ सभी बालक अपने दैनिक कार्य बड़ी कुशलता से करते हुए देखे जा सकते हैं। यहाँ पर यमुना नदी के ठीक सामने संत सूरदास जी की स्मृति में बना सूर–श्याम मंदिर भी है। मंदिर के ऊपर लगे एक बोर्ड से ज्ञात होता है की सन् 1971 में इसका शिलान्यास भारत के राष्ट्रपति श्री वी.वी. गिरी द्वारा किया जा गया था। इस मंदिर पर हमारी मुलाकाल एक मौनी बाबा से हुई जो हल्की–हल्की काली–सफेद दाढी–मूंछ रखे हुए थे और कपड़ों के नाम पर एक धोती पहने हुए थे। उन्होंने हमें इशारों में बताया कि वे बारह साल से मौन हैं और केवल दूध व फल लेते हैं। वे स्वभाव से बड़े ही प्रसन्नचित्त थे और खूब मुस्कुरा रहे थे, उन्होंने हमें सूरदास जी व श्री कृष्ण का मंदिर दिखाया और साथ ही मंदिर के पास 500 वर्ष पुराना कुआँ भी, जिसमें श्री सूरदास जी के गिरने पर स्वयं भगवान श्री कृष्ण ने उन्हें कुँए से निकाला था।

मंदिर में दर्शन करके हम सीधे यमुना नदी पर पहुँचे वहाँ बैठने को पक्की छतरी बनी हुई थी, उसके बाद हम अपनी मोटरसाइकिलों पर सवार हो लगभग 12 बजे तक वहाँ से निकल लिए और दोपहर के 1 बजे तक घर पहुंच गए।

हम घर तो आ गए लेकिन वहां की प्यारी–प्यारी स्मृतियाँ, वो शांत वातावरण, वो तितलियों का प्यार, वो हिरनों की आँखे और भालुओं की बातें हमारे दिलो–दिमाग में बस गयीं। हमने सर्दी के दिनों यहाँ फिर से आने का निश्चय किया। तब शायद हमारी मुलाकात उन दुर्लभ पक्षियों से भी हो जाये और हम अपनी इस यात्रा में बने अपने नए दोस्तों से भी दुबारा मिल सकें।

वृद्ध माता पिताः एक बोझ

कल्पना चन्देल
वा.हि.भूवि.सं.,देहरादून

रिश्ते खून से नही बनते
अहसासों से बनते हैं
घर पत्थरों से नही
इन्सानों से बनते हैं

धरती को मां कहते हैं हम, पर हम क्या मां की रक्षा करते हैं, दिन – रात उसका शोषण करते हैं। जैसे हर बच्चा अपनी जिम्मेदारी को दूसरे भाई बहन पर डालना चाहता है, क्या यही प्यार है, क्या यही लगाव है। वह मां जिसने अपने मुंह से निवाला निकाल कर हमारा पोषण किया अपने गर्भ में रखकर अपने से खून से सींचा बाद में उसी मां के लिए हमारे पास वक्त नहीं है। क्यूं हम लोग इतने खुदगर्ज हो गए हैं। लेकिन यह भी सत्य है कि जैसा हम बो रहे वैसा ही हम काटेगें।

मां की दवाई खर्चा बेटे को मजबूरी लगता है
सिगेरट का धुआं उसे जरुरी लगता है।

धार्मिक आयोजनों में हम दिल खोल कर दिखावे के लिए खर्च करते हैं यदि मां कह दें कि यह दाल–सब्जी मुझे पसन्द नहीं तो आप सोचते हैं कि मां की जुबान चटोरी हो रही है। क्या हमने यह सोचा है कि हो सकता है उनके दांत टूट रहे हैं या टूट चुके हैं इसीलिए किसी भी खाने का आनंद उन्हें नहीं मिल पाता है क्योंकि जब हम भोजन को चबाते हैं तभी मुंह में लार ग्रंन्थियाँ अपना कार्य करके भोजन को स्वादिष्ट एवं पोषक बनाती है। अपनी व्यस्त दिनचर्या में से अपने बीवी – बच्चों के लिए समय निकालते हैं, वैसे ही हमें अपने व्यस्त दिनचर्या में से अपने मां – बाप या समाज के लिए भी समय निकालना चाहिए।

हर रिश्ते में मिलावट देखी
कच्चे रंगों की सजावट देखी
लेकिन सालों साल देखा है मां को
उसके चेहरे पर न थकावट देखी
न ममता में मिलावट देखी

माता – पिता बच्चों की छोटी – छोटी बातों का ध्यान रखते हैं कि हमारे बच्चे बड़े हो रहे है उन्हें भी निजता चाहिए, अपने आप थोड़ी सी जगह में रहकर, अभाव सहकर बच्चों की हर जरुरत को पूरा करते है लेकिन वही बच्चे बड़े होकर अपने माता – पिता को बोझ समझते हैं उन्हें अपने से दूर रखने की कोशिश करते हैं उनकी खांसी की आवाज, कराहने की आवाज बुरी लगती है। जो माता पिता सारी – सारी रात जागकर बच्चों की देखभाल करते है वही बच्चे बाद में उन्हें नजर अन्दाज करते हैं। माता पिता को यदि हम साथ नहीं ले जा पाते हैं, तो कोई बात नहीं लेकिन यदि हम उनसे इतना ही कह दें कि हमें अमुक जगह जाना है, उसी में वह खुश हो जाते हैं उन्हें लगता है कि मेरे बच्चे हमारी कितनी परवाह करते हैं। पूछने और बताने में अन्तर होता है। यह शब्दों का हेर–फेर है। लेकिन आज की युवा पीढ़ी अक्सर पूछती नहीं बल्कि बताती है कि मैं जा रहा/रही हूँ। यदि हम अपने को उनकी स्थिति में रखकर सोचें तो यह जो हमारे बीच में खालीपन है वह स्वतः भर जाएगा। बुजुर्ग माता पिता की आवश्यकताएं क्या हैं, हम लोगों का साथ और थोड़ा सा भोजन, यदि हम उनसे पूछ कर बनाएं तो उन्हें भी लगेगा कि हमारी घर में सबको परवाह है। हमें अपने बुजुर्गों के अनुभवों से लाभ प्राप्त करना चाहिए अर्थात् सलाह लेनी चाहिए, आज की पीढ़ी छोटी सी समस्या आ जाने पर घबरा जाती है या आवेश में आ

जाती है लेकिन यदि हम अपने बुजुर्गो से सलाह लेगे तो वह शान्त चित्त से अपने अनुभव के आधार पर अच्छा मार्ग दर्शन देंगे। किसी एक दिन को मदर्स डे या फादर्स डे मनाने से कुछ नही होगा। माता पिता हमारे लिए भगवान का दूसरा रुप है, हमारी सृजनकर्ता है, हमारा जो वजूद है वह उन्हीं के कारण है। उनकी महत्ता को किसी विशेष दिन से बांधने की जरुरत नहीं है। यही छोटी – छोटी बातें हैं जिनका अगर हम ध्यान रखें तो, यह जीवन में ऊर्जा प्रदान करती है। जरुरत है बस इस अहसास को जगाने की है। हमें अपने परिवार के साथ – साथ अपने बुजुर्ग माता पिता की देखरेख भी उतनी ही शिद्‌दत से करनी है क्योंकि यह अनमोल है आज जो हमारा वजूद है वह इन्हीं की बदौलत है। अगर हमारे पास समय है, तो अपने बुजुर्ग यदि हमारे साथ नहीं है तो हमारे आसपास भी बहुत से वृद्ध होंगे जिन्हें हमारे साथ की आवश्यकता है यदि हम अपने व्यस्त समय में से कुछ समय निकाल सकें तो हमें अपने परिवार अपने समाज को यह समय देना चाहिए, इससे हमें कितना संतोष मिलता है। क्योंकि परिवार से समाज, समाज से देश बनता है। एक अच्छे नागरिक होने का यह हमारा कर्तव्य है कि हम अपने आसपास की बातों को भी नजरअन्दाज न करें, बल्कि एक सभ्य/जागरुक नागरिक होने के नाते उन्हें भी पूरा करें। हमारे इस प्रयास को हमारे बच्चे भी देखते हैं, उन पर भी एक अच्छा सन्देश जाएगा। क्योंकि जैसा हम बोते हैं वैसा ही काटेंगे। यह मेरी प्रार्थना है वैसे तो आज के समय में सब समझदार लोग हैं। मैं यह किसी पर कटाक्ष नही कर रही हूँ जो भी लोग अगर इन बातों का अमल करते हैं उन्हें हमारी शुभकामनाएं। सदैव यही न सोचें कि उसने हमारे के लिए क्या किया बल्कि यह सोचें कि हमने क्या किया। कई बार बुजुर्गों से भी गलती हो जाती है, वह जिद कर लेते हैं बच्चों की तरह तो हमें यह बाते नजरअन्दाज कर देनी चाहिए क्योंकि कहते हैं न बच्चा बूढ़ा एक समान। किसी भी अच्छी बात की शुरुआत हमें अपने से करनी चाहिए हमेशा दूसरे से ही अपेक्षा ने करें स्वंय से शुरुआत करें। कहते हैं न जहां जागो, वही सवेरा है। मेरी बस एक विनती है, प्रार्थना है कि केवल अधिकारों को नही कर्तव्यों को भी याद रखें।

मां – बाप का दिल जीत लो
कामयाब हो जाओगे
वरना सारी दुनिया जीत कर भी
हार जाओगे

प्राचीन भारत में विज्ञान

मीनल मिश्रा
इंदिरा गाँधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय, मैदान गढ़ी, नई दिल्ली – 110068

अलबरूनी ने अपनी भारत यात्रा संबंधी वृतांतो में स्पष्ट लिखा है कि जितनी प्रगति विज्ञान के क्षेत्र में भारत में हुई उतनी और कहीं नहीं हुई थी। सच तो यह है कि प्राचीन काल में भी हमारा देश विज्ञान तथा प्रौद्यौगिकी के क्षेत्र में दुनिया भर के देशों में आगे था। भारत वर्ष में गणित, विज्ञान, खगोल और चिकित्सा से संबंधित विषयों में ज्ञानवर्धन चरम सीमा तक पहुंच चुका था। प्राचीन भारतीय चिकित्सा प्रणाली का विकास सिंधु घाटी सभ्यता से पता लगाया जा सकता है। हड़प्पा और मोहनजोदड़ो के पुरातात्विक अवशेष एक चिकित्सा प्रणाली के आस्तित्व की पुष्टि करते हैं। सिंधु घाटी के लोग संयंत्र दवाओं, पशु उत्पादों और खनिजों का इस्तेमाल किया करते थे। चिकित्सा की प्राचीन प्रणाली 1000 ई.पू. से गंगा के मैदानी इलाकों में विकसित हुई है जिसका विवरण वैदिक सभ्यता में अधिक मिलता है। भारत आयुर्वेद चिकित्सा का जन्म स्थान है। प्राचीन भारत में चिकित्सा संबंधित प्रसंग में आयुर्वेद का वर्णन अवश्य आता है। सुश्रुत तथा चरक ऐसे दो नाम हैं जिनको चिकित्सा के क्षेत्र में अत्यंत आदरणीय स्थान प्राप्त है। सुश्रुत एक शल्य चिकित्सक थे तथा चरक एक फिजीशियन थे। सुश्रुत ने 'सुश्रुत संहिता' पुस्तक में अनेक शल्य यानि सर्जिकल प्रक्रियाओं का वर्णन किया है। इसके अलावा इस पुस्तक में बाल रोग, स्त्री रोग, मनोरोग, कान, नाक, आंख तथा गले के रोगों और विष विज्ञान का उल्लेख है। सुश्रुत तथा चरक द्वारा लिखी हुई पुस्तकों का अरबी तथा फारसी तथा अन्य भाषाओं में अनुवाद हुआ। दुनिया भर के लोगों ने इसका लाभ उठाया है। बल्कि कहा जाता है कि मध्य एशिया में यूनानी चिकित्सा की नींव आयुर्वेद चिकित्सा पद्धति पर रखी है। इन चिकित्सा पद्धतियों में चिकित्सा मुरव्य रूप से मौसम के अनुसार की जाती है। लोग देशी तथा घरेलू चिकित्सा में विश्वास करते थे। स्त्रियों को छोटी छोटी बीमारियों के उपचार के लिये घरेलू नुस्खे मालूम थे। इनसे रोगी ठीक भी हो जाते थे।

आइये गणित के क्षेत्र में भारत की स्थिति पर विचार करें। कहा जाता है कि भारत में गणित विषय की शुरूआत 1200 ईसा पूर्व हुई थी। गणित के क्षेत्र में भारत दुनिया भर में आगे था। गणित पर आघारित कई सिद्धातों के कारण खगोल शास्त्रियों ने उच्च स्तरीय शोघ कार्य किया। प्राचीन भारत में खगोल विज्ञान के हुए शोघ कार्य तथा ज्ञान ने पूरी दुनिया के देशों को अचम्भित कर दिया था। आर्यभटट्, भास्कराचार्य, ब्रह्मगुप्त, महावीर और नीलकंठ जैसे विद्वानों द्वारा बहुत से महत्वपूर्ण योगदान किये गये हैं।

आर्यभट्ट ने संख्याओं का उपयोग कर स्थान मूल्य प्रणाली पर कार्य किया और उन्होंने नौ ग्रहों की स्थिति की खोज की तथा कहा कि नौ ग्रह सूर्य के चारों ओर घूमते हैं। उन्होंने यह भी कहा कि एक वर्ष में 365 दिनों की संख्या सही है। भास्कराचार्य को भारत के दूसरे विश्व प्रसिद्ध गणितज्ञ होने का गौरव प्राप्त है। ब्रह्मगुप्त का सबसे महत्वपूर्ण योगदान गणित में शून्य की खोज थी। वाराह मिहिर के बृहत संहिता तथा ब्रह्मगुप्त के ब्रह्म सिद्धांत ग्रथों में सूर्य ग्रहण से संबंधित भविष्य वाणियां मिलती है। भारतीय गणितज्ञों नें शून्य, दशमलव संख्या प्रणाली . ऋणात्मक संख्याओं, बीजगणित तथा त्रिकोणमिति में कई योगदान किये हैं।

अलबरूनी ने वाराह मिहिर तथा भास्कराचार्य की संस्कृत में लिखी हुई पुस्तकों का भी अनुवाद अरबी भाषा में किया। अरबी भाषा मे अनुदित इन पुस्तकों का प्रयोग दुनिया भर में किया गया। भारत में खगोल विज्ञान कितना विकसित था इसके प्रतीक आज भी मौजूद हैं। खगौलिक वेध शालाएं आज भी जयपुर,

दिल्ली, उज्जैन तथा वाराणसी में मौजूद हैं। जयसिंह द्वितीय ने ईंट पत्थरों से जन्तर मन्तर बनवाया क्योंकि उनका मानना था कि धातुओं से बने यंत्र समय के साथ घिस जाते हैं और उनकी शुद्धता समाप्त हो जाती है। पत्थर से निर्मित खगौलिक यंत्र आज भी प्राचीन भारत में विज्ञान की प्रगति को दर्शा रहे हैं। आज भी जिस नाप जोख को लेकर उनका निर्माण किया गया था बिल्कुल सही सिद्ध हो रहे हैं। खगोल विज्ञान का प्रयोग आजकल लोग शादी ब्याह तथा अन्य रीति रिवाज में करते हैं।

खनन तथा धातु प्रौद्योगिकी का भारत के लोगों को ज्ञान था। सभ्यता का इतिहास प्राचीन काल में धातुओं की उपयोग की कहानी से जुडा है। भारत के कई इलाकों में प्राचीन काल में खनन कार्यो के अवशेष पाये जाते हैं। जिनसे उस काल में भी खनन तथा धातु प्रौद्योगिकी में ज्ञान होने की पुष्टि मिलती है। सुवर्ण रेखा तथा सोन जैसी नदियो के तटों पर सोने के खनन कार्यों के होने के संकेत मिलते हैं। चाणक्य ने अपनी पुस्तक अर्थशास्त्र में लिखा है कि भूमि के नीचे पायी जाने वाली सारी संपदा उस देश के राजा की होती है। तात्पर्य यह है कि उस काल में खनन कार्य संचालित रूप से प्रारम्भ हो चुका था। खनन संबंधित कानून का भी प्रविधान था। वैसे तो धातु से संबंधित ज्ञान मानव जाति के प्रार्दुभाव जितना ही प्राचीन है। लोहा और तांबा जैसी धातुओं का खनन का इतिहास अत्यन्त ही प्राचीन है। भारतीय उपमहाद्वीप मे सोने और चांदी के गहने मोहनजोदडो 3000 ईसा पूर्व सिंधू घाटी मे पाये जाते हैं। हॉलांकि कार्बन तिथि के अनुसार 1 सहस्त्राब्दी ईसा पूर्व कर्नाटक के हट्टी मास्की क्षेत्र में मिलते हैं। 'आइने अकबरी' में लिखा है कि जस्ता धातु के खनन तथा प्रयोग का ज्ञान भारत में ही शुरू हुआ था। जावर माइंस के संग्राहलय में आज भी जस्त धातु से निर्मित पुराने पात्र रखे हैं। दिल्ली में कुतुबमीनार के परिसर में स्थित लौह स्तम्भ भी इसका प्रमाण है। उस समय भारत के लोग लोहे से मिश्रित ऐसी धातु के बारे में जानते थे जिसमें जंग नही लगती।

ज्योतिष विज्ञान में भारत के लोगों की अन्य दुनिया से कोई तुलना नहीं है। इसका विकास वैदिक काल में अपनी पराकाष्ठा पर था। यहाँ तक कि इसके कई पहलुओं को हम आज भी समझ नहीं पाये हैं। ज्योतिष का उल्लेख चारों वेदों में मिलता है। इतिहासकारों का मानना है कि चारों वेदों की रचना 4000 से 2500 ईसा पूर्व महान संतो द्वारा की गयी थी। ज्योतिष विषय प्राचीन ऋषियों द्वारा विचार का प्रमुख विषय था। यजुर्वेद में तारामंडल तथा ऋगर्वेद में राशि चक्रों का वर्णन मिलता है। अथर्ववेद में अंतरिक्ष राशि संबंधी चक्रीय विभाजनों, 28 नक्षत्रों, आकाश गंगा तथा सप्तऋषि मंडल का वर्णन मिलता है। भारतीय ज्योतिष वेदों और उपनिषदों के रूप में पुरानी है। हिन्दू ज्योतिष की प्रणाली, वेदांग के छह विषयों में से एक है। आर्यभटट् लगभग छठी शताब्दी ईसा पूर्व भारतीय ज्योतिष के खोए गौरव को पूनर्जिवित किया। आर्यभटट् ने आर्यभटीय ग्रंथ की रचना की जिसमें ज्योतिषशास्त्र के अनेक सिद्धांतों का प्रतिपादन है।

भारत में विज्ञान, गणित, खगोल तथा चिकित्सा जैसे विषय हमारी संस्कृति से अभिन्न रूप से जुडे हुए थे। हमें चाहिए की हम आज भी विज्ञान तथा प्रौद्योगिकी को अपनी संस्कृति तथा विज्ञान रहन सहन से जोडें। यदि हम अपनी प्रगति तथा उन्नति को संस्कृति से नहीं जोडेंगे तो यह हमारी संस्कृति का अभिन्न अंग नहीं बन पाएगा तथा वैज्ञानिक और प्रौद्योगिकी विकास अधूरा रह जाएगा। विज्ञान तथा प्रौद्योगिकी के क्षेत्रों में हुए विकास को यदि हम अपनी संस्कृति से जोडेंगे तो हम सम्पूर्ण शक्तियों को सृजनात्मक कार्यो पर केन्द्रित कर पायेंगें जो कि हमारे देश निर्माण तथा मानव जाति के लिए लाभकारी होगा।

पहाडों की गोद से

विशाल चौहान
वा.हि.भूवि.सं., देहरादून

पहाड़ों की गोद से, पेडों की ओट से, एक सुहानी हवा आती है,
बगीचे के फूलों को, बच्चों के झूलों को, हल्के से हिला जाती है।
चीड़ के जंगलों से, झींगुरों के दंगलों से, मधुर सी तानें आती है,
बिन पानी के झरनों सी, बिन बाजों के शहनाई सी, कानों में बजती जाती है।
नासपाती के पेड़ों से, जंगली फूलों की बेलों से, भीनी सी खुशबू आती है,
बिन मीठे पकवान के, बिन रसना के पान के, अजब सी मिठास दे जाती है।
खुले नीले आसमान से, बादलों के मकान से, लुकी–छिपी किरणें जाती हैं,
ममता के अहसास सा, रिश्तों में विश्वास सा, दिल को प्रकाश दे जाती हैं।
पहाड़ों में बसे मकानों से, सीढ़ीनुमा खेत–खलिहानों से, कई आवाजें आती हैं,
कुछ तस्वीरें छुटपन की, भूले हुए बचपन की, सुनहरी यादें दे जाती हैं।
मैनाओं के पंखों से, बुलबुलों के कंठों से, सुरमयी सरगम आती हैं,
बिन तबलों के ताल सी, गायिकाओं के गान सी, सुरताल सुनाकर जाती हैं।
पहाड की पगडंडियों से, भेड़ों की जुगलबंदियों से, मिली जुली आवाजें आती हैं,
एकता में विश्वास का, दोस्ती में जज्बात का, सरल सन्देश दे जाती हैं।
ऊंची खडी चट्टानों से, भयंकर तेज तूफानों से, घनघोर गर्जना आती है,
मुश्किलों में उठने का, समस्याओं से लड़ने का, हिम्मती हौसला दे जाती हैं।
तूफानी रातों के बाद की, सूरज की रश्मियों के साथ की, जब नयी सुबह आती है,
जीवन में उल्लास का, जीने की नयी आस का, सतरंगी इन्द्रधनुष दे जाती है।

ऊंचे पहाड़

शान्ति प्रकाश 'जिज्ञासु'
महासर्वेक्षक का कार्यालय, देहरादून

सफेद बर्फ से ढकी अप्रतिम ऊंचाई से ही नहीं जाना जाता है पहाड़
इस ऊंचाई पर रहने वालों से भी जाना जाता है पहाड़।

घने देवदार, रंसूल, बांज, बुरांस, चीड़, पंया, ग्वीराल से ही नहीं
उन वृक्षों की रक्षा करने वालों से भी जाना जाता है पहाड.।

मेलु, हिंसर, किनगोड, काफल, तिमला, बेडू, घिंगोर, खैणा से ही नहीं
इस फलों का स्वाद चखने वालों से भी जाना जाता है पहाड़।

बंसत में फ्योंली, सकनी, बुरांस, चमेली, कूंजा, के फूलों की सुन्दरता से ही नहीं
चैत्र से वैशाखी तक प्रातः उठने वाले फुल्लारियों से भी जाना जाता है पहाड़।

हिमालय से निकलने वाले गाड़ गधेरों नदियों गर्म स्रोतों से ही नहीं
उन देवालयों की सेवा करने वालों से भी जाना जाता है पहाड़।

सावन भादों की हरियाली, झरनों के संगीत, पहाड़ी जड़ी बूटियों से ही नहीं
सर्दी मे ठिठुरते, बरसात में भीगे लोगों से भी जाना जाता है पहाड़।

विशालकाय ऊंची शिलाओं की पैनी सिराओं और गहरी खोह से ही नहीं
उन पर बांसुरी बजाने, गाय को आवाज देने वालों से भी जाना जाता है पहाड़।

पिकनिक मनाकर उनकी खुबसूरती बिगाड़ने वालों से ही नहीं
वहां के दरकते पहाड़ फटते बादलों से भी से भी जाना जाता है पहाड़।

पहाड़ की खूबसूरती उगते चमकती चांदनी की मधुरिमा से ही नहीं
कोमल मन, कठोर तन, पहाड़ जैसी जिन्दगी ढोने वालों से भी जाना जाता है पहाड़।

उड़ान

कल्पना चन्देल
वा.हि.भूवि.सं., देहरादून

उड़ान थी ऊंची मेरी, पर पैर धरा पर थे
चन्द लोग जो खुद न चल पाए
पैरों पर थीं उनके सदियों से डाली गई बेड़ियां
वह मेरे पैरों में डाल गए बेड़ियां
इरादे मजबूत थे
मैंने तब समाज की जंजीरों को तोड़ा
मां—बाप को भी झिंझोड़ा
कहा मैं उड़ना चाहती हूँ
आगे बढ़ना चाहती हूँ
मत बांधो पंख मेरे, रस्मों और रिवाजों से
मुझे उड़ना है ऊँचे बहुत ऊँचे
मेरी सोच को मत विराम दो
मैं नदी हूँ, मुझे बहने दो
रोकने से, आवेग थमेगा नहीं
अगर मैं पढ़ गई,
आपके आशीर्वाद से आगे बढ़ गई तो
समाज की हर कुरीति को खत्म करुंगी
अपनी शिक्षा रूपी नदी के बहाव में
ले जाऊंगी ऊँच नीच, अन्धविश्वास, रुढ़ियों को

मुझे विश्वास दो, मुझे अहसास दो
कि मैं कमजोर नहीं, अबला नहीं
रजिया हूँ, लक्ष्मीबाई हूँ,
मैं कल्पना, सुनीता हूँ, अरुणिमा हूँ
जो एक टांग से एवरेस्ट को जीतती है
क्योंकि हौसलों से उड़ान होती है
और इरादों में जान होती है
ठान ले गर कोई
हर मुश्किल आसान होती है।

न झुक, न झुका
झूम कर शान से तिरंगे की तरह लहरा
यह मेरा देश, मेरे देश की शान है
हमारी बेटियां हमारी आन—बान—शान है
इस नन्ही सी कली में हमारी जान है
कर हिफाजत इसकी,
क्योकि यही हमारी भूत, भविष्य वर्तमान है।
भर इनके इरादों में जान
दो हौसला, भरे उड़ान।

मैं और आस्था

महेन्द्र प्रताप सिंह बिष्ट
हे0न0ब0गढ़वाल विश्वविद्यालय, श्रीनगर

जब क्षीरसागर में रहता था
तब श्री विष्णु कहलाता था।
अब हिमालय में रहता हूँ
तो शालीग्राम कहलाता हूँ।
तब शेषनाग की शय्या थी
और सृष्टि को पाठ पढ़ाता था।
अब पत्थरों की शय्या है
भू मण्डल की बात बताता हूँ।
तब तीनों लोक में रहता था
अब एक लोक में सिमटा हूँ।
मैं तब भी पूजा जाता था
मैं अब भी पूजा जाता हूँ।
सिर्फ फर्क जरा सा है इतना
तब मैं सत्यनारायण कहलाता था
अब अमोनाइट कहलाता हूँ।
तब मैं साकार रूप में था
अब जीवाश्म के रूप में हूँ।

वाडिया संस्थान हूँ मैं ....

पी0एस0 नेगी,
वा.हि.भूवि.सं., देहरादून

वाडिया भू–विज्ञान संस्थान हूँ मैं,
हिमालय के सुहावने गीत गाता हूँ मैं।
पानी, मिट्टी व पत्थरों की जांच से ही,
पर्वतों का भूत व भविष्य खोज लेता हूँ मैं।
भूगर्भीय उठक–पठक व भू–आकृतिक बदलाव को
बांचने का प्रयास करता हूँ मैं।
वाडिया संस्थान हूँ मैं ....

भू–गर्भ विज्ञान का शानदार अतीत व वर्तमान हूँ मैं,
वर्तमान शोधार्थियों का सुनहरा भविष्य हूँ मैं।
अभी तो बचपन गुजार कर जवानी देख रहा हूँ मैं,
विज्ञान की बुलन्दियाँ छूने का ख्याब रखता हूँ मैं।
वाडिया संस्थान हूँ मैं ....

डी0एन0 वाडिया का मानस बीज हूँ मैं,
एस0पी0 नौटियाल का पिरोया सूत्र हूँ मैं,
समर्पित वैज्ञानिक का सींचा हुआ वृक्ष हूँ ,
इसलिये विश्व पटल पर अपनी जगह बनाने में दक्ष हूँ मैं।
वाडिया संस्थान हूँ मैं ....

हिमालय निर्माण, जीवन गाथा व संरचना समझने में तल्लीन रहता हूँ मैं,
भारतीय द्वीप के तिब्बत टकराव से हिमालय का निर्माण मानता हूँ मैं,
इसलिये प्राग–ऐतिहासिक टेथिक समुद्र को लुप्त प्रायः जानता हूँ मैं,
वाडिया संस्थान हूँ मैं ....

वर्षा, तापमान, बर्फबारी के भी रहस्य जानता हूँ मैं,
इन्ही के बदलाव से जलवायु परिवर्तन बाँचता हूँ मैं,
हिमालय और समुद्र को एक दूसरे का पूरक मानता हूँ मैं,
इसलिये मानसून को समुद्र से जोड़कर देखता हूँ मैं।
समुद्र से जुड़ा मानकर, जीवाश्म द्वारा भी प्रकृति के राज खोजता हूँ मैं,
पंच तत्वो को भी खास शोधकर, इन्ही में जीवन का इतिहास ढूढ़ता हूँ मैं।
वाडिया संस्थान हूँ मैं ....

हिमालय बर्फ व ग्लेशियर का हिसाब–किताब भी रखता हूँ मैं,
कौन–कितना पिघला, उसका गणित भी बता देता हूँ मैं।
पर्वतों में हो रहे बदलाव को, नदियों में जमा अवसाद से भाप लेता हूँ मैं,
सम्पूर्ण हिमालयी उथल–पुथल को समुद्री अवसाद से जांच लेता हूँ मैं।
इसलिये पुरातन काल में मानसून कैसा था, यह भी खोज लेता हूँ मैं।
वाडिया संस्थान हूँ मैं ....

हिमालय क्षेत्र में पर्यावरण व जलवायु में भी, अच्छी दखल रखता हूँ मैं
इसलिये राष्ट्रीय व अन्तर्राष्ट्रीय पत्रिकाओं, द्वारा शोध आदान–प्रदान करता हूँ मैं।
वर्तमान व प्राग–एतिहासिक काल की, प्राकृतिक घटनाओं को भी वांचता हूँ मैं,
इसलिये ट्री–रिंग, आइसोटोप, ओ0एस0एल0 आदि तकनीकी को भी अपनाता हूँ मैं।
वाडिया संस्थान हूँ मैं ....

परियोजनाओं व विकास कार्यों में, वैज्ञानिक मार्गदर्शन भी देता हूँ मैं,
इसलिये पृथ्वी के सतह के साथ–साथ भूगर्भ में भी झांकता हूँ मैं।
पन बिजली, ग्लेशियर व भूकम्प के क्षेत्र में भी अध्ययन करता हूँ मैं,
इसलिये हिमालय में बाँध व भूकम्पीय क्षेत्रों के बारे में पूछा जाता हूँ मैं।
वाडिया संस्थान हूँ मैं ....

वर्ष 1991 उत्तरकाशी, 1999 चमोली जैसी भूकम्प से घबराता हूँ मैं,
वर्ष 1990 नीलकंठ व 2013 केदारनाथ जल प्रलय जैसी आपदा से छटपटाता हूँ मैं,
इसीलिये अवैज्ञानिक विकास न करने की सलाह देता हूँ मैं।
वाडिया संस्थान हूँ मैं ....

कौन सी चट्टान कब और कैसे बनी, यह भी जान लेता हूँ मैं,
लाखों–करोड़ों वर्ष पुराने पहाड़ों की जन्मपत्री बना देता हूँ मैं,
इसलिये हिमालय के पंडित जी का भी फर्ज भी निभाता हूँ मैं,
वाडिया संस्थान हूँ मैं, ...

चूंकि प्रकृति के बीच ही खेलता व गुनगुनाता हूँ मैं,
पवित्र गंगा की अविरल धारा ही रखना चाहता हूँ मैं।
हिमालय का पर्यावरण सम्मत व सतत विकास चाहता हूँ मैं,
इसलिये मानव, प्रकृति व विकास से सामंजस्य चाहता हूँ मैं।
वाडिया संस्थान हूँ मैं ....

****

नव–वर्ष 2015

पी0एस0 नेगी
वा.हि.भूवि.सं., देहरादून

हे ईश्वर नववर्ष में, कुछ ऐसा करवा देना
फिर से नालन्दा, तक्षशिला व विक्रमशिला बनवा देना ।

जिससे मेरे देश की संस्कृति गुंजाये, मेरे देश का सम्मान इतराये
मेरे देश का विज्ञान महकाये, मेरे देश का झन्डा फहराये

मेरे देश की धरती अंगड़ाये, मेरे देश की खेती लहराये
मेरे देश की मिट्‌टी सोना बन जाये, मेरे देश का युवा विश्व नायक हो जाये
हे ईश्वर नववर्ष में कुछ ऐसा ....।

हे ईश्वर नववर्ष में कुछ ऐसा करवा देना ....
मेरे देश का दुश्मन कहराये, मेरे देश का दोस्त मुस्कराये
भ्रष्टाचार और गरीबी, जड़ से मिट जाये
मेरे देश में समृद्धि चहचहाये, मेहनत–ईमानदारी शान बन जाये,
देशभक्ति, बलिदान संस्कार बन जाये, हर घर में मानवता भर जाये ।

हे ईश्वर नववर्ष में कुछ ऐसा करवा देना.............।
मेरा देश फिर से सोने की चिड़िया बन जाये
हम फिर से विश्व गुरू होकर गौरवशाली बन जायें,
हम फिर से विश्व के पथ प्रदर्शक हो जायें ।
हे ईश्वर नववर्ष में कुछ ऐसा करवा देना.............।

एक पत्थर की कहानी

जूली जायसवाल
वा.हि.भूवि.सं., देहरादून

जो कभी अचल, विराट एवं ऊँचे पर्वत का अंग था,
हर मौसम में उस गगनचुम्बी के संग था,
सर्दी की बर्फीली हवायें, गर्मी की तेज धूप एवं तीव्र वर्षा से,
घायल होकर भी उसके हृदय में उमंग था,
हमेशा शीर्ष पर विराजमान होने का शायद क्षणिक घमण्ड था।
लेकिन समय के थपेड़ोंने उसका अहम् चूर–चूर किया,
उसे अर्श से फर्श पर लाकर पटक दिया,
अब वह अस्थिर, सूक्ष्म और अकेला पड़ गया,
अश्रु भरे नैनों से पर्वत को देखते हुए एक कोने पर ठहर गया,
और बड़ी आशा से गिरिराज की निहारने लगा।
लेकिन शाख से टूटा पत्ता कब पौधे से मिल पाया है,
प्रकृति ने कभी ऐसा धरातल नहीं बनाया है।
अब हताश–निराश पत्थर ने
जीवन के कड़वे सत्य को जान लिया,
स्वयं के अस्तित्व का पहचान लिया,
एवं आप ही अपना सम्मान किया।
समय बीतता गया और वह पत्थर धरा पर घिसता गया,
कभी लहरों ने ढकेला, कभी किसी मनचले ने फेंका,
तो कभी हवा ने पटका,
और एक दिन वह पत्थर एक शिल्पकार के हाथ लगा,
तभी हथौड़े और छैनी ने जोर आजमाया,
और देखते ही देखते वो पत्थर,
ईश्वर की मूरत में बदल गया,
वस्त्र और आभूषणों से सुसज्जित हो गया,
और सादर, एक मंदिर में स्थापित कर दिया गया,
जहां स्वयं भूनरेश ने उसका चंदन तिलक किया,
माथा टेक, उससे आशीष लिया,
और इस प्रकार वह पत्थर,
पुनः फर्श से अर्श पर पहुँच गया।

संस्थान समाचार

स्थापना दिवस समारोह

29 जून 2014 को संस्थान का पैतालीसवां स्थापना दिवस मनाया गया। इस अवसर पर प्रो. एस.के. दुबे, पूर्व निदेशक, आई.आई.टी. खड़कपुर मुख्य अतिथि थे और उन्होने "स्टोर्म सर्ज प्रीडिक्शन इन द नौर्थ इंडियन ओशन" विषय पर व्याख्यान दिया। इस अवसर पर डा. डी.पी. डोभाल, मनीष मेहता एवं दीपक श्रीवास्तव के पेपर 'इन्फ्लुऐंस ऑफ डेब्रिस कवर ऑन डर्मिनस रिट्रीट एण्ड मास चेन्जेज ऑफ चोराबारी ग्लेशियर, गढ़वाल रीजन, सेन्ट्रल हिमालया, इंडिया (जरनल ऑफ ग्लेशियोलौजी, 2013, 59 (217) : 961–971) के पेपर को बेस्ट पेपर अवार्ड दिया गया। संस्थान के कर्मचारियों को मुख्य अतिथि द्वारा विभिन्न पुरस्कार प्रदान किए गए तथा अश्मिका अंक 20 का विमोचन भी किया गया।

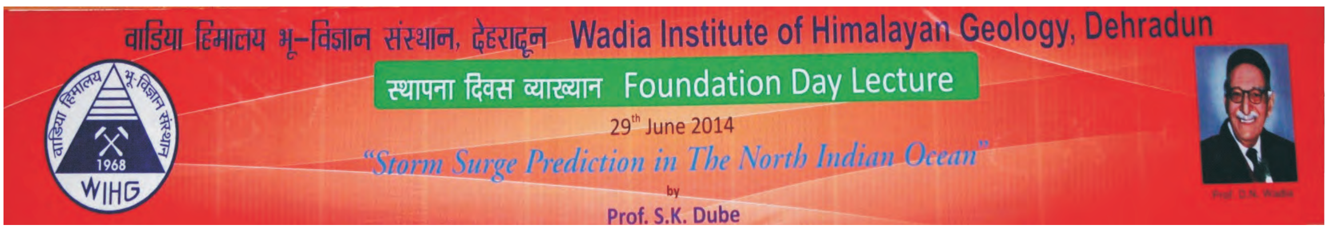

हिन्दी पखवाड़ा

संस्थान में दिनांक 14 सितम्बर से 28 सितम्बर, 2014 तक, हिन्दी पखवाड़ा मनाया गया। 14 सितम्बर को दीप प्रज्वलन और सरस्वती वन्दना के साथ हिन्दी पखवाड़े का शुभारंभ किया गया, इसके अन्तर्गत स्कूली बच्चों व संस्थान के कर्मचारियों के लिए विभिन्न प्रतियोगिताएं आयोजित की गई। इस अवसर के मुख्य अतिथि थे प्रोफेसर वी.के. जैन, वाइस चांसलर, दून विश्वविद्यालय, देहरादून, पद्मश्री चण्डी प्रसाद भट्ट, श्री बुद्धिनाथ मिश्र और दिनेश चमोला भी इस अवसर पर अपने विचार प्रस्तुत करने के लिये आमंत्रित थे। स्कूली बच्चों के लिये एक निबन्ध प्रतियोगिता का आयोजन किया गया। इस पखवाड़े के अन्तर्गत एक व्याख्यान माला का आयोजन किया गया। विभिन्न वैज्ञानिकों एवम् साहित्यकारों द्वारा व्याख्यान भी प्रस्तुत किये गये। इस अवसर पर राष्ट्रीय स्तर के कवियों द्वारा एक काव्य गोष्ठी का भी सफल आयोजन किया गया। इस पखवाड़े के समापन समारोह में डा. सुचिस्मिता सेनगुप्ता पांडे को आमन्त्रित किया गया जिन्होंने 'भारतीय वैज्ञानिकों का आत्मबोध' व्याख्यान दिया और विभिन्न प्रतियोगिताओं के प्रतिभागियों को पुरस्कार वितरित किये।

15 अगस्त 2014

26 जनवरी 2015

त्रैमासिक हिन्दी कार्यशाला
दिनांक फरवरी 6, 2015
वाडिया हिमालय भूविज्ञान संस्थान, देहरादून
WIHG
1968

WADIA INSTITUTE OF HIMALAYAN GEOLOGY, DEHRA DUN
PUBLICATIONS AVAILABLE FOR SALE

HIMALAYAN GEOLOGY
(These volumes are the Proceedings of the Annual Seminars on Himalayan Geology organizsed by the Institute)

		(in Rs)	(in US $)
Volume 1	(1971)	130.00	26.00
Volume 2*	(1972)	50.00	-
Volume 3*	(1973)	70.00	-
Volume 4*	(1974)	115.00	50.00
Volume 5	(1975)	90.00	50.00
Volume 6	(1976)	110.00	50.00
Volume 7	(1977)	110.00	50.00
Volume 8(1)	(1978)	180.00	50.00
Volume 8(2)	(1978)	150.00	45.00
Volume 9(1)	(1979)	125.00	35.00
Volume 9(2)	(1979)	140.00	45.00
Volume 10	(1980)	160.00	35.00
Volume 11	(1981)	300.00	60.00
Volume 12	(1982)	235.00	47.00
Volume 13*	(1989)	1000.00	100.00
Volume 14* (in Hindi)	(1993)	600.00	-
Volume 15*	(1994)	750.00	

(Available from M/s Oxford & IBH Publishing Co. Pvt. Ltd., New Delhi, Bombay, Kolkata)

Volume 16*	(1999)	1000.00	100.00

Journal of Himalayan Geology
(A bi-annual Journal : published from 1990 to 1995)

Annual Subscription	(in Rs)	(in US $)
Institutional	500.00	50.00
Individual	100.00	25.00

Volume 1*	(1990)
Volume 2	(1991)
Volume 3	(1992)
Volume 4*	(1993)
Volume 5	(1994)
Volume 6*	(1995)

HIMALAYAN GEOLOGY
(A bi-annual Journal incorporating Journal of Himalayan Geology)

Volume 17 (1996)	Annual Subscription:	(in Rs)	(in US $)
	Institutional	500.00	50.00
	Individual	100.00	25.00
	Revised Annual Subscription:		
	Institutional	750.00	50.00
	Individual	100.00	25.00

Volume 18 (1997) to Volume 27 (2006)*
Volume 28 (2007) to Volume 29 (2008)
Volume 30 (2009) to Volume 32 (2011)*
Volume 33 (2012)
Volume 34 (2013) to Volume 35 (2014)*

Volume 36 (2015)	Institutional	750.00	50.00
	Individual	100.00	25.00

OTHER PUBLICATIONS

Geology of Kumaun Lesser Himalaya, 1980 (by K.S. Valdiya)	Rs. 180.00 US $ 50.00
Geology of Indus Suture Zone of Ladakh, 1983 (by V.C.Thakur & K.K. Sharma)	Rs. 205.00 US $ 40.00
Bibliography on Himalayan Geology, 1975-85	Rs. 100.00 US $ 30.00
Geological Map of Western Himalaya, 1992 (by V.C. Thakur & B.S. Rawat)	Rs. 200.00 US $ 15.00
Excursion Guide :The Siwalik Foreland Basin (Dehra Dun-Nahan Sector), (WIHG Spl. Publ. 1,1991) (by Rohtash Kumar and Others)	Rs. 45.00 US $ 8.00
Excursion Guide : The Himalayan Foreland Basin (Jammu-Kalakot-Udhampur Sector) (WIHG Spl Publ.2,1999) (by A.C. Nanda & Kishor Kumar)	Rs. 180.00 US $ 15.00
Glacier Lake Inventory of Uttarakhand (by Rakesh Bhambri et al. 2015	Rs. 500.00 US $ 50.00
Siwalik Mammalian Faunas of the Himalayan Foothills With reference to biochronology, linkages and migration (by Avinash C. Nanda)	Rs. 1200.00 US $ 100.00
Atlas of early Palaeogene invertebrate fossils of the Himalayan foothills belt (WIHG) Monograph Series No. 1, 2000) by N.S. Mathur & K.P. Juyal (Available from M/s Bishen Singh Mahendra Pal Singh, 23-A New Connaught Place, Dehradun- 248001, Email: bsmps@vsnl.com	Rs. 1450.00 US $ 50.00

Note: 'Journal of Himalayan Geology' & 'Himalayan Geology' have been merged and are being published as Himalayan
' Geology' after 1996.
*** Out of Stock**

Life Time Subscribers for Himalayan Geology
India: Rs. 1000/- Abroad: US $ 100/=
Note: A free set of old volumes (1971-2005, subject to availability) of Himalayan Geology will be provided to the newly registered Life Time Subscriber Scheme Members for a limited time (Postage to be borne by the Subscriber).

Trade Discount (In India only)
1-10 copies: 10%, 11-25 copies: 15%
More than 25 copies: 25%

Publications: *may be purchased from Publication & Documentation Section and Draft/Cheque may be drawn in the name of The Director, Wadia Institute of Himalayan Geology, 33- General Mahadeo Singh Road, Dehra Dun – 248 001*

Phone: 0135-2525430 Fax: (91) 0135-625212 Website: http://www.himgeology.com E-mail: himgeol@wihg.res.in